CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संहितापदयोर्विशेषपाठदीपिका

(माध्यन्दिनीया)

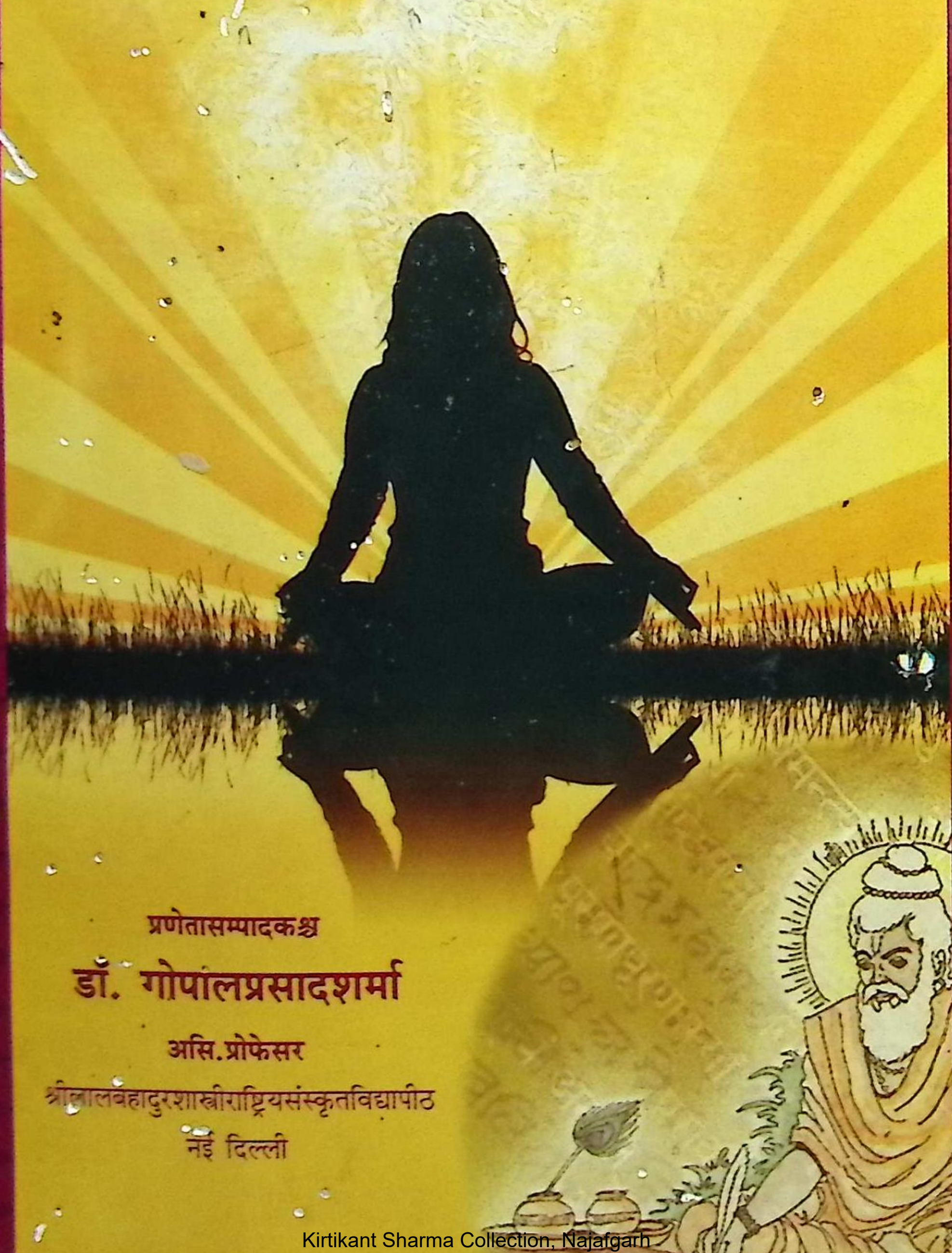

प्रणेतासम्पादकश्च

डॉ. गोपालप्रसादशर्मा

असि. प्रोफेसर

श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृतविद्यापीठ

नई दिल्ली

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आदरणीय डॉ. श्री कीर्ति कान्त जी
शर्मा के करकमलों में सादर समर्पित
— गोपाल — 10-04-2017

SAMHITĀPADAYORVIŚEṢĀ PĀTHĀDĪPIKĀ

(MĀDHYANDINIYĀ)

SCANNED

BY

Dr. GOPAL PRASHAD SHARMA
Asst. Proffesor
Department of VEDA
Shri Lalbhadur Shastri Rashtriya Sanskrit Vidyapeeth
NEW DELHI

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रकाशक :

आचार्य गोपाल चन्द्र मिश्र वैदिक उन्नयन संस्थान

सीके. ३२/१७, ब्रह्मनाल,

वाराणसी - २२१००२ उ.प्र.

© सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

प्रथम संस्करण - फरवरी, २०१४ ई०

मूल्य - ₹१५०/-

पुस्तक प्राप्ति स्थान -

श्री गोपाल प्रसाद शर्मा

के. २२/१८, दूधविनायक

पंचगंगाघाट, वाराणसी।

दूरभाष - ०५४२-२४१९९०६

मुद्रक :

नारायण प्रेस

सोनारपुरा, वाराणसी।

दूरभाष - ०५४२-२२७५१०९

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Prof. Shree Kishore Mishra
M.A., Ph.D., Acharya
Professor
Deptt. of Sanskrit
Faculty of Arts
Banaras Hindu University
Varanasi – 221 005

Residence-
7, Professors' Colony
Jagatganj
Varanasi 221 002
Phone # (0542) 2204403
09415685328 (M)
Date------------------------

FOREWORD

Swadhyaya plays a prominent role to build human character in Indian culture . In the ancient Indian civilization, the Swadhyaya was regarded as an essential duty in daily routine. Among various civilizations in the world, only Indian culture has considered Swadhyaya as a moral duty (धर्म) to be performed without a desire of result by every one. Ancient Indian thinkers and philosophers maintain that our traditional educational knowledge is not merely means to purify the physical structure of a man, but it is a special golden path to attain the heavenly world or eternal goal.

The Swadhyaya doctrine is the fundamental peculiarity of the Indian civilization in comparison with the other civilizations of the world. Thus the Swadhyaya becomes an essence of Indian system of life.

In order to preserve Vedic texts and to protect the Vedic phonims in their original form, the Swadhyaya was used as a special means. That is why the Upanisad teaches- स्वाध्यायान्मा प्रमदः, स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्, अहरहः स्वाध्यायमधीयीत etc. To provide more opportunities for the Swadhyaya practice, invention of new techniques was made by Acharyas. Some of them are Parayana, Mantrajagara, Suktajapa and Vasantapuja. Among these methods the Vasantapuja is the simple and popular one. It is maintained that the Vasantapuja method hails from Kashi tradition of Vedic recitation and it spread over in every part of the country, because of its very smooth procedure and more usefulness .

The present book prepared by Dr. Gopal Prasad Sharma on this untouched topic is a fresh approach towards preservation of the ancient knowledge. Dr. Sharma holds an unparallel position in the country for the Vikriti- recitation of Madhyandina school . On the other hand he possesses a deep knowledge of Vedic commentaries and modern Vedic research and criticism. This rare combination of Vedic knowledge urged Dr. G.P. Sharma to compose various useful works in Vedic field.

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

The present संहितापदयोर्विशेषपाठदीपिका is a mile stone work in the field of Vedic recitation. In order to retain durable memorization of Vedic verses a technical procedure of chanting to be adopted by the traditional Vedic scholars of Madhyandina school has been prepared with accent marks and published for the first time. This significant work of Dr. G.P. Sharma for the uninterrupted tradition of Vedic chanting and phonetic science of pronunciation, is certainly a valuable contribution.

I congratulate Dr. Sharma for this painstaking venture and fresh presentation before the scholarly world. The book will open new dimensions of research in the field of linguistics and Sanskrit studies in general and Vedic recitation in particular. I hope a wide appreciation of the work among the scholars.

Ananta-chaturdashi- 2070 — Professor of Sanskrit

Varanasi — Banaras Hindu University

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्राक्कथन

"स्वाध्यायोध्येतव्यः" का अर्थ होता है, "अध्ययनेन स्वाध्यायं भावयेत्" शतपथ-ब्राह्मण में कहा गया है कि "अहरहः स्वाध्यायमधीयीत"। स्वाध्याय से तात्पर्य अपनी कुलपरम्परा से प्राप्त वेद की किसी शाखा के अध्ययन से है। अपनी शाखा को छोड़कर दूसरी शाखा का अध्ययन विहित नहीं है।

माध्यन्दिनीय शाखाध्यायी उत्तर-भारत में लगभग सर्वत्र हैं। वाराणसी में भी माध्यन्दिनशाखा का अधिक प्रचार-प्रसार है। आज भी माध्यन्दिन शाखा के घनान्ती विद्वान् वाराणसी में उपलब्ध हैं। इस प्रकार के जो पारम्परिक वैदिक विद्वान् हैं, उन सभी विद्वानों के लिये यह "संहितापदयोर्विशेषपाठदीपिका" उपयोगी होगी।

प्रस्तुत पदानुक्रमणिका वै० प्र० श्री श्रीनाथ जी मिश्र वेदाचार्य, घनपाठी जी ने मुझे अन्यन्त कृपापूर्वक दी थी, यह पदानुक्रमणिका उन्हें वै.प्र. श्री राजाराम निर्मले जी घनपाठी ने प्रदान की थी, मैं परमादरणीय श्री मिश्रजी के प्रति सादर हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापन करता हूँ।

प्रस्तुत "संहितापदयोर्विशेषपाठदीपिका" के निबन्धन मे आदरणीय गुरुवर प्रो. श्रीकिशोरमिश्र ने बहुमूल्य सुझाव एवं

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निर्देशन दिया, इस पुस्तक का नामरकण भी उनके द्वारा ही हुआ है, एतदर्थ मैं उनको सादर प्रणति निवेदित करता हूँ। इस पुस्तक के लिये उन्होंने कृपापूर्वक "Forwording" भी लिखा अतः मैं उनका कृतज्ञा हूँ।

प्रस्तुत पदानुक्रमणिका से सम्बन्धित सर्वविध कार्यों में श्री स्वामी नारायणानन्दतीर्थ वेद विद्यालय के शुक्लयजुर्वेदाध्यापकद्वय चि. विमलचन्द्र काण्डपाल एवं चि. दुर्गेश कुमार पाण्डेय ने सहायता की है। विशेष रूप से चि.काण्डपाल ने कम्प्यूटर-टाईप एवं ईक्ष्य-शोधन सम्बन्धी कार्यों में विशेष सहयोग प्रदान किया है। अतः मैं इन दोनों को साधुवाद एवं शुभाशीष प्रदान करता हूँ।

- डॉ. गोपालप्रसाद शर्मा

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विषयानुक्रमणिका

क्रम		पृष्ठ संख्या
१)	मङ्गलाचरणम्	१
२)	माध्यन्दिनीय स्वाध्याय की विशेष परम्परा	२ - १४
३)	सप्ततन्तुग्रथिता शृङ्खला	१५ - ३०
४)	एकादशतन्तुग्रथिता शृङ्खला	३१ - ५४
५)	पदानुक्रमणिका	५५ - ७२

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

।। मङ्गलाचरणम् ।।

पदज्ञास्थ रमतयः संहिता विश्वनाम्नीः।
उप मा देवीर्देवेभिरेत।। (अथर्व. ७/७५/२)

भावार्थ - हे रमतयो गावो वाचो विश्वनाम्नीः संहिता इति
व्याप्तनामधेयाः प्रसिद्धाः पदज्ञाः पदसंज्ञाःस्थ,
हे देव्यो! देवेभिर्देवैः सह मा मामुपगच्छत।
यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते।
तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा।। (यजु.३२/१४)

भावार्थ - जिस परम पवित्र मेधा की देव एवं पितृगण उपासना करते हैं, हे अग्ने! आज तुम उसी पवित्र मेधा से मुझे भी मेधावी बनाओ।

ॐकारप्रौढमूलः क्रमपदसहितश्छन्दविस्तीर्णशाखः।
ऋक्पत्रः सामपुष्पो यजुरधिकफलोऽथर्वगन्धं दधानः।।
यज्ञच्छायासमेतो द्विजमधुपगणैः सेव्यमानः प्रभाते।
मध्ये सायं त्रिसन्ध्यं सुचरितचरितः पातु नो वेदवृक्षः।।

भावार्थ - ॐकारात्मक सुदृढमूलयुक्त क्रमपदादि पाठों सहित विविध छन्दों से फैली हुई शाखाओं वाला ऋग्वेदरूपी पत्र, सामवेदपुष्प यजुर्वेदरूपी विविध फलों वाला तथा अथर्ववेदात्मक सुगन्ध धारण करता हुआ यज्ञात्मक आश्रय छाया प्रदान करने वाला ब्राह्मणरूपी भ्रमरों के द्वारा प्रातः मध्याह्न एवं सायं तीनों सन्ध्याओं में सेवित होता हुआ पवित्र चरित्र विधाता वेद-वृक्ष हमारी रक्षा करे।

गुरुक्रमेणाध्येतव्यः ससन्धिः सावसानकः।
त्रिस्वरोऽपरिवर्त्यश्च पाठ आद्यस्तु संहिता।।

भावार्थ - वेद का गुरुमुखोच्चारणानूच्चारणपूर्वक सन्धिसहित अवसान से युक्त, उदात्तानुदात्तस्वरित स्वरों से युक्त कथमपि अपरिवर्तनीय प्रथम पाठ संहिता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

माध्यन्दिनीय-स्वाध्याय की विशेष परम्परा

वेद की रक्षा का सर्वप्रथम उपाय अध्ययन है। महाभाष्य (पस्पशाह्निक) में कहा गया है कि "ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च"। निष्कारण शब्द के प्रयोग का अर्थ कामना रहित होकर अध्ययन करने से है। पारम्परिक वैदिक वेद भगवान् की सेवा की भावना से ही अध्ययन एवं अध्यापन करते हैं। इस प्रकार ये वैदिक श्रीमद्भगवद्गीता के निष्काम कर्म के साक्षात् उदाहरण हैं।

वेद का अध्ययन गुरु की सन्निधि में ही होता है। यह अध्ययन सर्वथा परिश्रमपूर्वक ही होता है। बिना परिश्रम वेदाध्ययन की कल्पना असम्भव है। जितना परिश्रम संहिता मात्र के कण्ठस्थीकरण में होता है, उसके चतुर्थांश परिश्रम से ही एक विद्यार्थी सिद्धान्त-कौमुदी को आद्योपान्त अच्छी तरह से कण्ठस्थ कर सकता है।

दूसरी ओर जिस विद्यार्थी ने सिद्धान्त-कौमुदी कण्ठस्थ कर लिया, उसे सिद्धान्त-कौमुदी को यथावत् रखने के लिए उतना परिश्रम नहीं करना पड़ता है, जबकि संहिता को कण्ठस्थ रखने के लिए अनवरत उसकी आवृत्ति करनी

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पड़ती है। वेद शब्द-राशि के सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि "नौ दिन में नया हो जाता है (भ्रान्ति होने लगती है) एवं बीस दिन में भूल जाता है। कदाचित् इसी कारण अत्यधिक परिश्रम की आवश्यकता को स्पष्ट करते हुए याज्ञवल्क्य-शिक्षा में कहा गया है कि -

गुणिता शतशो विद्या सहस्रावर्तिता पुनः।
आगमिष्यति जिह्वाग्रे स्थलान्निम्नमिवोदकम्।।
शतेन गुणितायाति सहस्रेण च तिष्ठति।
जप्त्वा शतसहस्रेण प्रेत्य चेह च तिष्ठति।।
जलमभ्यासयोगेन शैलानां कुरुते क्षयम्।
कर्कशानां मृदुस्पर्शं किमभ्यासान्न साधयेत्।।[१]

वाजसनेय-संहिता के अध्यायों में २१वाँ अध्याय (इमम्मे) एवं २८वाँ अध्याय (होता यक्षत्) कठिन माने जाते हैं। समलिङ्गक (एक जैसे) मन्त्रों के कारण इनका कण्ठस्थ पाठ करने में सावधानी की आवश्यकता होती है। शृङ्खला (साँकड़ी) के रूप में इनका कण्ठस्थ पाठ करने में अत्यधिक सावधानी की आवश्यकता होती है। यह सावधानी कठोर अभ्यास के फलस्वरूप ही होती है।

---

१ याज्ञवल्क्य-शिक्षा-श्लोक - १६८-१७०.

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वाजसनेय-शाखा के वैदिकों में दो प्रकार की शृङ्खला प्रसिद्ध है। प्रथम प्रकार की शृङ्खला को "सप्ततन्तुग्रथिता-शृङ्खला" कहते है। इस शृंखला के अन्तर्गत "इमम्मे" एवं "होता यक्षत्" इन दोनों अध्यायों के ७ अनुवाक आते हैं। "होता यक्षत्" अध्याय तो पूर्ण रूप से इस शृङ्खला के अन्तर्गत आ जाता है। "होता यक्षत्" अध्याय में ४ अनुवाक हैं। जबकि ६ अनुवाकों वाले "इमम्मे" अध्याय में से ३ अनुवाक इस शृङ्खला में पढ़े जाते हैं। "होता यक्षत्समिधाग्निम्" इस मन्त्र से प्रारम्भ होने वाले अनुवाक में १२ मन्त्र हैं। शृङ्खला बोलते समय "होता यक्षन्नराशंसन्न" इस मन्त्र को छोड़ दिया जाता है। कुल ७९ मन्त्र कहे जाते हैं।

द्वितीय प्रकार की शृङ्खला में ११ अनुवाक आते हैं। कुल १२३ मन्त्र होते हैं। इसे "एकादशतन्तुग्रथिता शृङ्खला" कहते हैं। सप्ततन्तुग्रथिताशृङ्खला के अतिरिक्त इसमें चार अनुवाक और जुड़ जाते हैं। २०वें अध्याय के दो अनुवाक ("समिद्धऽइन्द्रः" से प्रारम्भ होने वाला अनुवाक पूरा बोला जाता है। "समिद्धोऽअग्निः" से प्रारम्भ होने वाला अनुवाक भी बोला जाता है परन्तु इस अनुवाक के तीसरे मन्त्र "इन्द्रायेन्दुम्" को छोड़ दिया जाता है।) कहे जाते हैं।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

२७वें अध्याय का "ऊद्ध्वाऽअस्य" यहाँ से प्रारम्भ होने वाला अनुवाक "मध्वायज्ञम्" इस तीसरे मन्त्र को छोड़कर पूरा कहा जाता है। २९वें अध्याय का "समिद्धोऽअद्य" यहाँ से प्रारम्भ होने वाला अनुवाक "नराशंसस्य महिमानम्" इस तीसरे मन्त्र को छोड़कर पूरा बोला जाता है।

२१वें अध्याय के "होता यक्षन्नराशंसन्न", २०वें अध्याय के "इन्द्रायेन्दुम्", २७वें अध्याय के "मध्वा यज्ञम्" एवं २९वें अध्याय के "नराशंसस्य महिमानम्" इन मन्त्रों को शृङ्खला बोलते समय न लिये जाने का कारण यह है कि ये मन्त्र जिन अनुवाकों में आते हैं वे १२ मन्त्रों के अनुवाक हैं। इन मन्त्रों को शृङ्खला (महाराष्ट्रीय वैदिक विद्वान शृङ्खला को साँकड़ी कहते हैं) में लेने पर अन्य अनुवाक यतः ११ मन्त्रों के है, अतः अन्य मन्त्रों के साथ इनका सामञ्जस्य नहीं बैठ पाता है।

मैने अध्ययन के क्रम में प्रातः स्मरणीय गुरुजी वै०प्र० श्री मनोहर देवीदास जोशी जी घनपाठी, शतपथचूड़ामणि के साथ एक बार सप्ततन्तुग्रथिता-शृङ्खला की चर्चा[1] की थी।

---

१ आभ्यासमर्द्धमन्त्रस्य यथार्हं पक्षयोर्द्वयोः।
कथनं प्रोच्यते चर्चा स्वाध्यायः प्रत्यहं जपः।।
-सम्प्रदायप्रबोधिनी शिक्षा, श्लोक-२१

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वसन्तपूजा[१] में भी एक बार कहने का सुअवसर प्राप्त हुआ था। पूज्य गुरुजी ने स्वयं अपने करकमलों से लिखकर मन्त्रप्रतीकात्मक सप्ततन्तुग्रथिता-शृङ्खला मुझे दी थी, जिसके अन्तर्गत प्रत्येक मन्त्र के अध्याय एवं मन्त्र-सङ्ख्या का क्रमशः निर्देश था। एकादशतन्तुग्रथिताशृङ्खला के क्रम का भी मुझे उपदेश दिया था।

वै०प्र० श्री अरुण दीक्षित जी ने दोनों शृङ्खलाओं के मन्त्र-प्रतीक मात्र की छाया प्रति मुझे प्रदान किया। इसके लिए मैं उनके प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

यदि प्राचीन परम्परा को संरक्षित रखते हुए नवीन पीढ़ी के वैदिक मन्त्रों को कहने की इस प्रकार की क्लिष्ट एवं लुप्तप्राय परिपाटी को जीवित रख सकेंगे तो मैं अपने श्रम को सार्थक समझूँगा।

वाराणसी में वसन्तपूजा की परम्परा प्राचीनकाल से है। इस पूजन के अन्तर्गत सभी शाखाओं के वैदिक विद्वानों को सादर आमन्त्रित कर ऋग्वेदादि क्रम से उनका पूजन किया जाता है। पूजन के क्रम में केसरयुक्त सुगन्धित चन्दन

---

१. "वसन्तपूजा" = वाराणसेया हि वैदिकाः यजमानेन प्रार्थिताः पूजिताश्च पक्षद्वये स्थित्वा सस्पर्द्धं सोत्साहं च यं वैदिकं पाठमधीयते सा वसन्तपूजा। शब्दसाधुत्वं लोकप्रसिद्धेरूहनीयम्। - सम्प्रदायप्रबोधिनीशिक्षा - श्लोक ३८ का भाष्य

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

से वैदिक विद्वानों के सम्पूर्ण ललाट को अनुलिप्त किया जाता है। इसके अनन्तर अक्षत लगाया जाता है एवं पुष्पमाला पहनायी जाती है। चन्दन लगाने के साथ ही मन्त्रारम्भ हो जाता है।

ऋग्वेदादि क्रम से पूजन होने के कारण पूजन के क्रम में अवस्था का प्राधान्य न होकर वेदक्रम का प्राधान्य होता है। अर्थात् सर्वप्रथम ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद के वैदिक विद्वानों का पूजन होता है। सर्वप्रथम ऋग्वेद के एक वरिष्ठ वैदिक का, यजुर्वेद के एक वरिष्ठ वैदिक का, सामवेद के एक वरिष्ठ वैदिक का तदनन्तर अथर्ववेद के एक वरिष्ठ वैदिक का पूजन होता है इसके अनन्तर अन्य सभी वैदिकों का पूजन किया जाता है। एक शाखा की वसन्तपूजा होने पर उसी शाखा के विद्वानों का पूजन किया जाता है एवं एक ही शाखा के मन्त्रों का पाठ होता है। ऋग्वेदादि क्रम से ही तत्तत् विद्वान् वेदमन्त्रों का पाठ करते हैं। मन्त्रपाठ के अन्तर्गत सामान्यतया दो पर्याय होते हैं। प्रथम पर्याय में संहिता, क्रम एवं पद के मन्त्रों का पाठ किया जाता है। द्वितीय पर्याय में विकृतिपाठ का क्रम आता है। इस पर्याय में जटादि विकृतियों का पाठ होता है। माध्यन्दिन-शाखा में शिखापाठ के अनन्तर

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पंचसन्धिपाठ भी होता है। घनपाठ के अनन्तर पंचसन्धिमालायुक्त घनपाठ भी माध्यन्दिन-शाखा की विशेषता है। वसन्तपूजा में ब्राह्मणपाठ भी होता है। सामवेद में पदपाठ भी होता है। अथर्ववेद का संहितापाठ ही किया जाता है। वसन्तपूजा के सभी मन्त्रपाठ चर्चात्मक ही होते हैं। सामवेद की गोवर्धनी-पद्धति के विद्वान् वसन्तपूजा में चर्चात्मक पाठ नहीं करते। सभी शाखाओं के मन्त्रपाठ के अनन्तर यजमान को आशीर्वादात्मक मन्त्राक्षत दिया जाता है एवं यजमान के द्वारा सभी वैदिक विद्वानों को दक्षिणा, मिष्ठान्नादि सादर दिया जाता है।

पहले मन्त्रजागरण अथवा चक्री-वसन्तपूजा भी होते थे। मेरे प्रातः स्मरणीय गुरुजी श्री मनोहर देवीदास जोशी, घनपाठी, शतपथचूड़ामणि ने एक संस्मरण सुनाते हुए कहा था कि एक बार वसन्तपूजा में संहिता एवं क्रमपाठ के पश्चात् "अश्मन्" से प्रारम्भ कर "तेजः" तक अर्थात् पाँच अध्याय पद के ही हुए थे, इसके अनन्तर अन्य विकृतिपाठ भी हुए थे। एक अन्य संस्मरण में उन्होंने बताया था कि एक वसन्तपूजा में "त्रिंᳫशद्धाम" से "रुहेमेतिरुहेम" अर्थात् लगभग तीन अध्याय घन के ही हुए थे। इसी प्रकार के अन्य संस्मरण भी हैं।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इस प्रकार से परिश्रमपूर्वक वेदभगवान् की सेवाभावना से ही वसन्तपूजा में मन्त्रों का पाठ होता था। वसन्तपूजा का निमन्त्रण पाना एक गौरव का विषय होता था। आज वसन्तपूजा की विशेषता अनेक कारणों से घट रही है।

वैदिकों में उसी को अच्छा वैदिक माना जाता है, जिसे पद का अच्छा अभ्यास हो। सारी सन्धियाँ पदों के आधार पर ही होती हैं। पदों के स्वरूपज्ञान के बिना कोई सन्धि नहीं की जा सकती है। वाराणसी के वैदिक वेद की रक्षा के लिये घोर परिश्रम करते थे। मेरे गुरुजी एक आसन (सुखासन) पर कई घण्टे लगातार अभ्यास करते थे। वे छात्रजीवन मे बहुत कम सोते थे। रात्रिजागरण के फलस्वरूप उन्हें हाल के वर्षों तक रात्रि में लगभग १-२ बजे तक नींद नहीं आती थी।

एक बार जब वे सांगवेद विद्यालय में छात्रावस्था में आवृत्ति कर रहे थे तो उनके मुँह से रक्त आ गया था। विद्यालय की ऊपरी मंजिल से श्री मेहता जी देख रहे थे। वे गुरुजी के पास आने के लिये सीढ़ियों सें नीवे उतरने लगे, जब तक मेहता जी गुरुजी के पास आते, गुरुजी ने भूमि में पड़े रक्त को गमछे से पोंछ लिया। बात आगे बढ़ने की सम्भावना से मेहता जी के पूछने पर गुरुजी ने कहा कि कोई बात नहीं है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसी प्रकार एक बार गुरुजी को गणेशोत्सव की प्रतियोगिता-परीक्षा में बैठना था। दुर्योग से परीक्षा से पहले उनके दाँये काँख के नीचे एक बड़ा सा व्रण हो गया था, जो कि कष्टदायक था, स्वरसंचालन में भी कष्ट हो रहा था। इस व्रण की चर्चा गुरुजी ने किसी से नहीं की। दुपट्टा ओढ़ने के कारण बाहर से पता नहीं चलता था। वे परीक्षा में बैठ गये। परीक्षा में लगभग २ घण्टे के अनवरत परिश्रम के पश्चात् वह फोड़ा फूट गया एवं उससे मवाद, रक्त इत्यादि बाहर आया। ऐसा देखकर उनके गुरुजी ने पूछा कि यह क्या है? तो गुरुजी ने सहजभाव से उत्तर दिया कि यदि मैं यह बता देता कि मुझे फोड़ा हुआ है, तो कदाचित् आप मुझे परीक्षा में नहीं बैठने देते।

मेरे गुरुजी छात्रावस्था में माध्यन्दिनीय-शतपथ-ब्राह्मण को कण्ठस्थ कर उसकी परीक्षा देने के लिये भी तैयार हो गये थे, परन्तु विद्यालय के तत्कालीन अध्यक्ष पण्डितराज श्री राजेश्वर शास्त्री द्रविड से कुछ बातों पर मतैक्य न होने के कारण यह ऐतिहासिक घटना सम्भव न हो सकी। यह वैदिकों के घोर परिश्रम का निदर्शन मात्र है।

पहले पंचाझार अर्थात् गमछाझार आवृत्ति की जाती थी। जब कोई वैदिक मन्त्रपाठ के लिये आसन पर बैठने के बाद मन्त्रपाठ सम्पूर्ण होने पर अपना गमछा झारता था

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तो इसका अर्थ यह हुआ कि सम्पूर्ण पाठ में मेरी कोई त्रुटि नहीं हुई एवं मैंने गमछाझार आवृत्ति की। महाराष्ट्री में गमछा को पंचा कहा जाता है। मैंने अध्ययन के क्रम में गुरुजी से पद की चर्चा करने की विधा भी सीखी थी। यह एक कठिन विधा है भूतस्यभव्यस्य करने वाले तो मिल जाते हैं। जो अकेले दम पर चर्चात्मक पद का अध्याय कह सकता है, वही वास्तविक वैदिक है।

वाराणसी में पद की चर्चा करने की समृद्ध परम्परा रही है। पहले ऐसे वैदिक थे, जो किसी सहाध्यायी के न मिलने पर किसी खम्भे को ही सहाध्यायी मानकर अपना पद बोलते जाते थे, खम्भे का पद छोड़ देते थे। जैसे प्रथमाध्याय स्वयं प्रारम्भ करने पर इ॒षे, ऊ॒र्ज्जे, व्वा॒यव॑÷, दे॒व?, स॒वि॒ता, अ॒र्प्प॒य॒तु॒ इत्यादि पद क्रमशः सस्वर बोलते जाते थे। खम्भे के द्वारा प्रथमाध्याय का प्रारम्भ मानने पर त्वा॒, त्वा॒, स्थ॒, व्व॒ः, प्र, श्रेष्ठ्ठतमा॒येति॒श्श्रेष्ठ्ठ तमाय इत्यादि पद क्रमशः हस्तस्वर सहित बोलते जाते थे। इस क्रम से सम्पूर्ण अध्याय चर्चात्मक कहते थे। अन्य अध्याय भी इसी प्रकार कहते थे।

पहले के वैदिकों को पद की चर्चा करने का व्यसन था। जो वैदिक अध्याय का प्रथम पद बोलता है, उस वैदिक के पास किन-किन मन्त्रों का आद्य पद आयेगा,

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसका निबन्धन प्रस्तुत पदानुक्रमणिका में किया गया है। कदाचित् किसी एक पद का विस्मरण होने पर जो अध्याय सम हैं, वे विषम हो जायेंगे एवं जो विषम हैं, वे सम हो जायेंगे। ऐसी दुरवस्था से बचाने में इस पदानुक्रमणिका का महत्त्व है। जिस वैदिक को पदानुक्रमणिका का स्मरण हो, वह वैदिक पद की चर्चा करते समय अपने पद का ध्यान रखता है एवं किसी पद के विस्मरण होने पर आगे नहीं बढ़ता है। जिस मन्त्र से पद का व्यतिक्रम हुआ है, उसे सुधार सकता है। अपने पद का इदमित्थम् ज्ञान करने के लिये इस पदानुक्रमणिका का अतिशय महत्त्व है।

प्रस्तुत पदानुक्रमणिका श्री बालमुकुन्द भट्ट वाशिंकर द्वारा संवत् १९७५ में लिखी गयी है, जैसा कि पदानुक्रमणिका के अन्त में लिखा है। जिन अध्यायों में पदों की संख्या सम है, उन अध्यायों के अन्त में अन्तिम दो पद दिये गये हैं। जैसे प्रथमाध्याय में पदों की संख्या ६१४ है, अर्थात् प्रथमाध्याय पदसंख्या की दृष्टि से सम है। इस अध्याय के अन्त में अन्तिम दो पद "देवयजनमसि" लिखा गया है। इसका यह भी तात्पर्य है कि जो वैदिक "इषे" बोलना प्रारम्भ करेगा उसके पास "देवयजनम्" पद आयेगा, वह वैदिक इतिकरण सहित "देवयजनमितिदेव यजनम्" ऐसा

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पाठ करेगा। जो भी पद इतिकरण युक्त हैं, उन्हें इस पदानुक्रमणिका में लेखक ने लाघव की दृष्टि से इतिकरणरहित करके ही लिखा है।

जिन अध्यायों में पदों की संख्या विषम है, उन अध्यायों के अन्त में मात्र अन्तिम एक पद ही लिखा गया है। जैसे आठवें अध्याय में १०१९ पद हैं, अर्थात् यह अध्याय पदसंख्या की दृष्टि से विषम है। आठवें अध्याय के अन्त में अन्तिम एक पद "स्वाहा" ही दिया गया है। इसका यह भी तात्पर्य है कि जो वैदिक "आदित्येभ्य:" बोलना प्रारम्भ करेगा, उसके पास "स्वाहा" पद आयेगा। लेखक ने पाँचवें अध्याय तक ही अध्यायान्तर्गत आने वाले पदों की संख्या का परिगणन किया है। गुरुजी ने प्रत्येक मन्त्र की पदसंख्या का परिगणन करके उस मन्त्र के साथ लिखा था साथ ही सभी मन्त्रों की पदसंख्या को जोड़ कर अध्यायान्त में लिखा था। मैंने छठवें अध्याय से लेकर चालीसवें अध्याय तक गुरुजी द्वारा परिगणित संख्या को ही अध्यायान्त में लिखा है, इस प्रकार मैं गुरुजी के परिश्रम का ही लाभ उठा रहा हूँ।

गुरुजी के अनुसार ४० अध्यायों के सम्पूर्ण पदों की संख्या २८,९२९ है। इस संख्या में वे पद दो बार हैं, जो कि पद-प्रकृति को पृथक् रूप से बताते हैं। जैसे

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रथमाध्याय के सातवें मन्त्र में निष्टप्तम्, निस्तप्तम् एवं प्रथमाध्याय के पन्द्रहवें मन्त्र में शमीष्व, शमिष्व इत्यादि। यही क्रम पदसंख्या के सम्बन्ध में सर्वत्र अपनाया गया है। वसन्त-पूजा में अथवा अन्यत्र भी इन पदों को दो बार बोला जाता है।

संहितापाठ की इस विशिष्ट परम्परा का संरक्षण प्राचीन आचार्यों ने विविध पाठशैलियों के अनुसन्धान तथा प्रयोग के द्वारा किया था। पदपाठ की सुरक्षा भी पदों की गणना तथा उसके सुदृढ परिपालन के द्वारा किया गया है। वाङ्मय-संरक्षण की यह अद्भुत परम्परा मात्र भारतवर्ष में दृष्टिगोचर होती है। इस विशिष्ट पाठशैली का इदम्प्रथमतया तथा प्रकाशन वैदिक अध्ययन तथा भाषावैज्ञानिक विश्लेषण की दिशा में उपयोगी होगा।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सप्ततन्तुग्रथिता शृङ्खला

१. समिद्धोऽ अग्निः समिधा सुसमिद्धो व्वरेण्ण्यः॥ गायत्रीच्छन्दऽ इन्द्रियन्त्र्यविर्ग्गौर्व्वयो दधुः॥[१]

२. होता यक्षत्त्समिधेन्द्रमिडस्प्पदे नाभा पृथिव्व्याऽ अधि॥ दिवो व्वर्ष्मन्त्समिद्ध्यतऽ ओजिष्ठश्चर्षणीसहाँ व्वेत्त्वाज्ज्यस्य होतर्व्यज॥[२]

३. होता यक्षत्त्समिधाग्निमिडस्प्पदेश्शिवनेन्द्रꣳ सरस्वतीमजो धूम्म्रो न गोधूमैः कुवलैर्भेषजम्मधु शष्प्पैर्न्न तेजऽ इन्द्रियम्पयः सोमः परिस्स्रुता घृतम्मधु व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्व्यज॥[३]

४. होता यक्षत्त्समिधानम्महद्यशः सुसमिद्धं व्वरेण्ण्यमग्निमिन्द्रं व्वयोधसम्॥ गायत्रीञ्छन्दऽ इन्द्रियन्त्र्यविङ्गाँ व्वयो दधद्वेत्त्वाज्ज्यस्य होतर्व्यज॥[४]

५. देवम्बर्हिरिन्द्रꣳ सुदेवन्देवैर्व्वीरवत्त्स्तीर्ण्णं व्वेद्यामवर्द्धयत्॥ व्वस्तोर्व्वृतम्प्राक्क्तोर्भृतꣳ राया बर्हिष्म्मतोत्त्यगाद्वसुवनै व्वसुधेयस्य व्वेतु यज॥[५]

---

१. वा.सं.२१.१२
२. वा.सं.२८.१
३. वा.सं.२१.२९
४. वा.सं.२८.२४
५. वा.सं.२८.१२

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

६. देवम्बर्हिः सरस्वती सुदेवमिन्द्रेऽ अश्विना॥ तेजो न चक्षुरक्ष्योर्ब्बर्हिषा दधुरिन्द्रियँ व्वसुवनें व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[१]

७. देवम्बर्हिर्व्वयोधसन्देवमिन्द्रमवर्द्धयत्॥ गायत्र्याच्छन्दसेन्द्रिय-ञ्चक्षुरिन्द्रे व्वयो दधद्वसुवनें व्वसुधेयस्य व्वेतु यज॥[२]

८. तनूनपाच्छुचिर्व्रतस्तनूपाश्च सरस्वती॥ उष्णिहाच्छन्दऽ इन्द्रियन्दित्यवाड्गौर्व्वयो दधुः॥[३]

९. होता यक्षत्तनूनपातमूतिभिर्ज्जेतारमपराजितम्॥ इन्द्रन्देवᳬ स्वर्व्विदम्पथिभिर्म्मधुमत्तमैर्न्नराशᳬसेन तेजसा व्वेत्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[४]

१०. होता यक्षत्तनूनपात्सरस्वतीमविर्म्मेषो न भेषजम्पथा मधुमता भरन्नश्विनेन्द्राय व्वीर्य्यम्बदरैरुपवाकाभिर्भेषजन्तोक्मभिः पयः सोमः परिस्रुता घृतम्मधु व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[५]

११. होता यक्षत्तनूनपातमुद्भिदँ यङ्गर्भमदितिर्द्दधे शुचिमिन्द्रँ व्वयोधसम्॥ उष्णिहञ्छन्दऽ इन्द्रियन्दित्यवाहङ्गाँ व्वयो दधद्वेत्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[६]

---

१. वा.सं.२१.४८
२. वा.सं.२८.३५
३. वा.सं.२१.१३
४. वा.सं.२८.२
५. वा.सं.२१.३०
६. वा.सं.२८.२५

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१२. देवीर्द्वारऽ इन्द्रꣳ सङ्घाते व्वीड्वीर्य्यामन्नवर्द्धयन् ॥ आ वत्सेन तरुणेन कुमारेण च मीवतापार्व्वाणꣳ रेणुककाटन्नुदन्ताँ व्वसुवने व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज ॥[1]

१३. देवीर्द्वारोऽ अश्विना भिषजेन्द्रे सरस्वती ॥ प्राणन्न व्वीर्य्यन्नसिद्वारो दधुरिन्द्रियँ व्वसुवने व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज ॥[2]

१४. देवीर्द्वारो व्वयोधसꣳ शुचिमिन्द्रमवर्द्धयन् ॥ उष्णिहाच्छन्द-सेन्द्रियम्प्राणमिन्द्रे व्वयो दधद्वसुवने व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज ॥[3]

१५. इडाभिरग्निरीड्यꣳ सोमो देवोऽ अमर्त्त्यः ॥ अनुष्टुप्छन्दऽ-इन्द्रियम्पञ्चाविर्गौर्व्वयो दधुः ॥[4]

१६. होता यक्षदिडाभिरिन्द्रमीडितमाजुह्वानममर्त्त्यम् ॥ देवो देवैः सवीर्य्यो व्वज्रहस्तः पुरन्दरो व्वेत्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज ॥[5]

१७. होता यक्षदिडेडितऽ आजुह्वानः सरस्वतीमिन्द्रम्बलेन व्वर्द्धयन्नृषभेण गवेन्द्रियमश्विनेन्द्राय भेषजँय्यवैः कर्कन्धु-भिर्म्मधु लाजैर्न्न मासरम्पयः सोमः परिस्रुता घृतम्मधु व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज ॥[6]

---

१. वा.सं.२८.१३
२. वा.सं.२१.४९
३. वा.सं.२८.३६
४. वा.सं.२१.१४
५. वा.सं.२८.३
६. वा.सं.२१.३२

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१८. होता यक्षदीडेन्यमीडितँ वृत्रहन्तममिडाभिरीड्यꣳ सहः सोममिन्द्रँ वयोधसम्॥ अनुष्टुभञ्छन्दऽ इन्द्रियम्पञ्चाविङ्गाँ वयो दधद्वेत्त्वाज्ज्यस्य होतर्यज॥[1]

१९. देवीऽ उषासानक्तेन्द्रँष्यज्ञेप्प्रयत्त्यह्वेताम्॥ दैवीर्व्विशः प्रायासिष्टाꣳ सुप्प्रीते सुधिते वसुवनें वसुधेयस्य वीताँय्यज॥[2]

२०. देवीऽ उषासावश्शिवना सुत्रामेन्द्रे सरस्वती॥ बलन्न वाचमास्यऽ उषाब्भ्यान्दधुरिन्द्रियँ वसुवनें वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[3]

२१. देवीऽ उषासानक्ता देवमिन्द्रँ वयोधसन्देवी देवमवर्द्धताम्॥ अनुष्टुभाच्छन्दसेन्द्रियम्बलमिन्द्रे वयो दधद्वसुवनें वसुधेयस्य वीताँय्यज॥[4]

२२. सुबर्हिरग्निः पूषण्णवान्स्तीर्णबर्हिरमर्त्त्यः॥ बृहतीच्छन्दऽ इन्द्रियन्त्रिवत्सो गौर्वयो दधुः॥[5]

२३. होता यक्षद्वर्हिषीन्द्रन्निषद्वरँ वृषभन्नर्य्यापसम्॥ वसुभी रुद्रैरादित्यैः सयुग्भिर्ब्बर्हिरासददद्वेत्त्वाज्ज्यस्य होतर्यज॥[6]

---

१. वा.सं.२८.२६
२. वा.सं.२८.१४
३. वा.सं.२१.५०
४. वा.सं.२८.३७
५. वा.सं.२१.१५
६. वा.सं.२८.४

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

२४. होता यक्षद्द्बर्हिरुर्ण्णम्म्रदा भिषङ्नासत्त्याभिषजाश्शिवनाश्श्वा शिशुमती भिषग्ग्धेनुः सरस्वती भिषग्दुहऽ इन्द्राय भेषजम्पयः सोमः परिस्त्रुता घृतम्मधु व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[१]

२५. होता यक्षत्सुबर्हिषम्पूषण्ण्वन्तममर्त्त्यः सीदन्तम्बर्हिषिप्प्रियेमृतेन्द्रं व्वयोधसम्॥ बृहतीञ्छन्दऽ इन्द्रियन्त्रिवत्सङ्गां व्वयो दधद्वेत्त्वा-ज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[२]

२६. देवी जोष्ट्री व्वसुधिती देवमिन्द्रमवर्द्धताम्॥ अयाव्व्यन्न्या-घाद्द्वेषाᳬंस्यान्न्या व्वक्षद्वसु व्वार्य्याणि यजमानाय शिक्षिते व्वसुवने व्वसुधेयस्य व्वीताँय्यज॥[३]

२७. देवी जोष्ट्री सरस्वत्त्यश्शिवनेन्द्रमवर्द्धयन्॥ श्रोत्रन्न कर्ण्णयोर्य्यशो जोष्ट्रीब्भ्यान्दधुरिन्द्रियँ व्वसुवने व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[४]

२८. देवी जोष्ट्री व्वसुधिती देवमिन्द्रं व्वयोधसन्देवी देवमवर्द्धताम्॥ बृहत्त्याच्छन्दसेन्द्रियᳬं श्रोत्रमिन्द्रे व्वयो दधद्वसुवने व्वसुधेयस्य व्वीताँय्यज॥[५]

२९. दुरो देवीर्द्दिशो महीर्ब्ब्रह्मा देवो बृहस्प्पतिः॥ पङ्क्तिश्छन्दऽ इहेन्द्रियन्तुर्य्यवाड्गौर्व्वयो दधुः॥[६]

---

१. वा.सं.२१.३३
२. वा.सं.२८.२७
३. वा.सं.२८.१५
४. वा.सं.२१.५१
५. वा.सं.२८.३८
६. वा.सं.२१.१६

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

३०. होता यक्षद्दोजो न वीर्य्यँ सहोद्द्वारऽ इन्द्रमवर्द्धयन्॥ सुप्प्रायणाऽ अस्मिन्न्यज्ञे विश्श्रयन्तामृतावृधोद्द्वारऽ इन्द्राय मीढुषे व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[१]

३१. होता यक्षद्दुरो दिशः कवष्ष्यो न व्यचस्वतीरश्शिवभ्यान्न दुरो दिशऽ इन्द्रो न रोदसी दुघे दुहे धेनुः सरस्वत्त्यश्शिवनेन्द्राय भेषजꣳ शुक्क्रन्नज्ज्योतिरिन्द्रियम्पयः सोमः परिस्स्रुता घृतम्मधु व्यन्त्वा-ज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[२]

३२. होता यक्षद्द्व्यचस्वतीः सुप्प्रायणाऽ ऋतावृधोद्द्वारो देवीर्हिरण्ण्ययीर्ब्ब्रह्माणमिन्द्रँ व्वयोधसम्॥ पङ्क्तिश्छन्दऽ इहेन्द्रियन्तुर्य्यवाहङ्गाँ व्वयो दधद्द्व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[३]

३३. देवीऽ ऊर्ज्जाहुती दुघे सुदुघे पयसेन्द्रमवर्द्धताम्॥ इषमूर्ज्जमन्न्या व्वक्षत्सग्ग्धिꣳ सपीतिमन्न्या नवेन पूर्व्वन्दयमाने पुराणेन नवमधातामूर्ज्जमूर्ज्जाहुतीऽ ऊर्ज्जयमाने व्वसु व्वार्य्याणि यजमानाय शिक्क्षिते व्वसुवने व्वसुधेयस्य व्वीताँय्यज॥[४]

३४. देवीऽ ऊर्ज्जाहुती दुघे सुदुघेन्द्रे सरस्वत्त्यश्शिवना भिषजावतः॥ शुक्क्रन्नज्ज्योतिस्त्तनयोराहुती धत्तऽ इन्द्रियँ व्वसुवने व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[५]

---

१. वा.सं.२८.५
२. वा.सं.२१.३४
३. वा.सं.२८.२८
४. वा.सं.२८.१६
५. वा.सं.२१.५२

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

३५. देवीऽ ऊर्ज्जाहुती दुघे सुदुघे पयसेन्द्रँ व्वयोधसन्देवी देवमवर्द्धताम्॥ पङ्क्त्याच्छन्दसेन्द्रियꣳ शुक्क्रमिन्द्रे व्वयो दधद्वसुवने व्वसुधेयस्य वीताँय्यज॥[1]

३६. उषे यह्वी सुपेशसा व्विश्श्वे देवाऽ अमर्त्त्याः ॥ त्रिष्टुप्छन्दऽ इहेन्द्रियम्पष्ठवाड्गौर्व्वयो दधुः॥[2]

३७. होता यक्षद्दुघेऽ इन्द्रस्य धेनू सुदुघे मातरा मही॥ सवातरौ न तेजसा व्वत्समिन्द्रमवर्द्धताँ व्वीतामाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[3]

३८. होता यक्षत्सुपेशसो नक्तन्दिवाश्श्विना समञ्ज्ञाते सरस्वत्त्यात्त्विषिमिन्द्रे न भेषजꣳ श्येनो न रजसा हृदाश्श्रिया न मासरम्पयः सोमः परिस्स्रुता घृतम्मधु व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[4]

३९. होता यक्षत्सुपेशसा सुशिल्प्पे बृहतीऽ उभे नक्त्तोषासा न दर्शते व्विश्श्वमिन्द्रँ व्वयोधसम्॥ त्रिष्टुभञ्छन्दऽ इहेन्द्रियम्पष्ठवाहङ्गाँ व्वयो दधद्वीतामाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[5]

४०. देवा दैव्व्या होतारा देवमिन्द्रमवर्द्धताम् ॥ हताघशꣳसावाभार्ष्टाँ व्वसु व्वार्य्याणि यजमानाय शिक्क्षितौ व्वसुवने व्वसुधेयस्य वीताँय्यज॥[6]

---

१. वा.सं.२८.३९
२. वा.सं.२१.१७
३. वा.सं.२८.६
४. वा.सं.२१.३५
५. वा.सं.२८.२९
६. वा.सं.२८.१७

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

४१. देवा देवानांम्भिषजा होतारावविन्द्रमश्विना॥ व्वषट्ट्कारैः सरस्वतीत्त्विषिन्न हृदये मतिङ्घ होतृभ्यान्दधुरिन्द्रियँ व्वसुवनं व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[1]

४२. देवा दैव्व्या होतारा देवमिन्द्रं व्वयोधसन्देवौ देवमवर्द्धताम्। त्रिष्टुभाच्छन्दसेन्द्रियन्त्विषिमिन्द्रे व्वयो दधद्वसुवने व्वसुधेयस्य व्वीतांय्यज॥[2]

४३. दैव्व्या होतारा भिषजेन्द्रेण सयुजा युजा॥ जगतीच्छन्दऽ इन्द्रियमनड्ड्वान्गौर्व्वयो दधुः॥[3]

४४. होता यक्षद्दैव्व्या होतारा भिषजा सखाया हविषेन्द्रम्भिषज्ज्यतः॥ कवी देवौप्प्रचेतसाविन्द्राय धत्तऽ इन्द्रियँ व्वीतामाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[4]

४५. होता यक्षद्दैव्व्या होतारा भिषजाश्विनेन्द्रन्न जागृवि दिवा नक्तन्न भेषजैः शूषङ्घ सरस्वती भिषक्क्सीसेन दुहऽ इन्द्रियम्पयः सोमः परिस्रुता घृतम्मधु व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[5]

४६. होता यक्षत्त्प्रचेतसा देवानामुत्तमँय्यशो होतारा दैव्व्या कवी सयुजेन्द्रं व्वयोधसम्॥ जगतीञ्छन्दऽ इन्द्रियमनड्ड्वाहङ्गां व्वयो दधद्वीतामाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[6]

---

१. वा.सं.२१.५३
२. वा.सं.२८.४०
३. वा.सं.२१.१८
४. वा.सं.२८.७
५. वा.सं.२१.३६
६. वा.सं.२८.३०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

४७. देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः पतिमिन्द्रमवर्द्धयन्। अस्पृक्षद्भारती दिवꣳ रुद्रैर्य्यज्ञꣳ सरस्वतीडा व्वसुमती गृहान्वसुवनें व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[१]

४८. देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीरश्विनेडा सरस्वती॥ शूषन्न मद्ध्ये नाब्भ्यामिन्द्राय दधुरिन्द्रियँ व्वसुवनें व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[२]

४९. देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्व्वयोधसम्पतिमिन्द्रवर्द्धयन्॥ जगत्त्या-च्छन्दसेन्द्रियꣳ शूषमिन्द्रे व्वयो दधद्वसुवनें व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[३]

५०. तिस्रऽ इडा सरस्वती भारती मरुतो व्विशः॥ व्विराट्छन्दऽ इहेन्द्रियन्धेनुग्गौर्न्न व्वयो दधुः॥[४]

५१. होता यक्षत्तिस्रो देवीर्न्न भेषजन्त्रयस्त्रिधातवोपसऽ इडा सरस्वती भारती महीः॥ इन्द्रपत्नीर्हविष्मतीर्व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[५]

५२. होता यक्षत्तिस्रो देवीर्न्न भेषजन्त्रयस्त्रिधातवोपसो रूपमिन्द्रे हिरण्ययमश्विनेडा न भारती व्वाचा सरस्वती महऽ इन्द्राय दुहऽइन्द्रियम्पयः सोमः परिस्रुता घृतम्मधु व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[६]

---

१. वा.सं.२८.१८
२. वा.सं.२१.५४
३. वा.सं.२८.४१
४. वा.सं.२१.१९
५. वा.सं.२८.८
६. वा.सं.२१.३७

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

५३. होता यक्षत्त्पेशस्वतीस्तिस्रो देवीर्हिरण्ययीर्ब्भारतीर्बृहतीर्म्महीः पतिमिन्द्रं व्वयोधसम्॥ व्विराजञ्छन्दऽ इहेन्द्रियन्धेनुङ्गान्न व्वयो दधद्वयन्त्वाज्ज्यस्य होतर्व्यज॥[1]

५४. देवऽइन्द्रो नराशंसस्त्रिवरूथस्त्रिबन्धुरो देवमिन्द्रमवर्द्धयत्। शतेन शितिपृष्ठानामाहितः सहस्रेणप्प्र वर्त्तते मित्रावरुणेदस्य होत्रमर्हतो बृहस्प्पतिस्तोत्रमश्शिवनाद्ध्वर्य्यवं व्वसुवने व्वसुधेयस्य व्वेतुयज॥[2]

५५. देवऽ इन्द्रो नराशंसस्त्रिवरूथः सरस्वत्याश्शिवभ्यामीयते रथः॥ रेतो न रूपममृतञ्जनित्रमिन्द्रायत्त्वष्टा दधदिन्द्रियाणि व्वसुवने व्वसुधेय व्यन्तु यज॥[3]

५६. देवो नराशंसो देवमिन्द्रं व्वयोधसन्देवो देवमवर्द्धयत्॥ व्विराजाच्छन्दसेन्द्रियः रूपमिन्द्रे व्वयो दधद्वसुवने व्वसुधेयस्य व्वेतु यज॥[4]

५७. त्वष्टा तुरीपोऽ अद्भुतऽ इन्द्राग्नी पुष्टिवर्द्धना॥ द्विपदाच्छन्दऽ इन्द्रियमुक्षा गौर्न्न व्वयो दधुः॥[5]

---

१. वा.सं.२८.३१
२. वा.सं.२८.१९
३. वा.सं.२१.५५
४. वा.सं.२८.४२
५. वा.सं.२१.२०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

५८. होता यक्षत्त्वष्टारमिन्द्रन्देवम्भिषजꣳ सुयजङ्घृतश्रियम्॥ पुरुरूपꣳ सुरेतसम्मघोनमिन्द्रायत्त्वष्टा दधदिन्द्रियाणि व्वेत्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[१]

५९. होता यक्षत्सुरेतसमृषभन्नर्य्यापसन्त्वष्टारमिन्द्रमश्विना भिषजन्न सरस्वतीमोजो न जूतिरिन्द्रियँ व्वृको न रभसो भिषग्ग्यशः सुरया भेषजꣳ श्रिया न मासरम्पयः सोमः परिस्रुता घृतम्मधु व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[२]

६०. होता यक्षत्सुरेतसन्त्वष्टारम्पुष्टिवर्द्धनꣳ रूपाणि बिभ्रतम्पृथक्पुष्टिमिन्द्रँ व्वयोधसम्॥ द्विपदञ्छन्दऽ इन्द्रियमुक्षाणङ्गान्न व्वयो दधद्वेत्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[३]

६१. देवो देवैर्व्वनस्प्पतिर्हिरण्णयपर्ण्णो मधुशाखः सुपिप्पलो देवमिन्द्रमवर्द्धयत्॥ दिवमग्ग्रेणास्पृक्षदान्तरिक्षम्पृथिवी-मदृꣳहीद्वसुवनेै व्वसुधेयस्य व्वेतु यज॥[४]

६२. देवो देवैर्व्वनस्प्पतिर्हिरण्णयपर्ण्णोऽ अश्विभ्याꣳ सरस्वत्या सुपिप्पलऽ इन्द्राय पच्च्यते मधु॥ ओजो न जूतिर्ऋषभो न भामँ व्वनस्प्पतिर्न्नो दधदिन्द्रियाणि व्वसुवनेै व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[५]

---

१. वा.सं.२८.९
२. वा.सं.२१.३८
३. वा.सं.२८.३२
४. वा.सं.२८.२०
५. वा.सं.२१.५६

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

६३. देवो व्वनस्प्पतिर्द्देवमिन्द्रँ व्वयोधसन्देवो देवमवर्द्धयत्॥ द्विपदाच्छन्दसेन्द्रियम्भगमिन्द्रे व्वयो दधद्द्वसुवने व्वसुधेयस्य व्वेतु यज॥[1]

६४. शमिता नो व्वनस्प्पतिः सविताप्प्रसुवन्भगम्॥ ककुप्च्छन्दऽ इहेन्द्रियँ व्वशा व्वेहद्द्वयो दधुः॥[2]

६५. होता यक्क्षद्द्वनस्प्पतिँ शमितारँ शतक्क्रतुन्धियो जोष्ट्टारमिन्द्रियम्॥ मद्ध्वा समञ्जन्पथिभिः सुगेभिः स्वदाति यज्ञम्मधुना घृतेन व्वेत्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[3]

६६. होता यक्क्षद्द्वनस्प्पतिँ शमितारँ शतक्क्रतुम्भीमन्न मन्न्युँ राजानँ व्व्याग्घ्रन्नमसाश्श्विना भामँ सरस्वती भिषगिन्द्राय दुहऽ इन्द्रियम्पयः सोमः परिस्रुता घृतम्मधु व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[4]

६७. होता यक्क्षद्द्वनस्प्पतिँ शमितारँ शतक्क्रतुँ हिरण्ण्यपर्ण्णमुक्क्थिनँ रशनाम्बिभ्र्रतँ व्वशिम्भगमिन्द्रँ व्वयोधसम्॥ ककुभञ्छन्दऽ इहेन्द्रियँ व्वशाँ व्वेहतङ्गाँ व्वयो दधद्द्वेत्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[5]

---

१. वा.सं.२८.४३
२. वा.सं.२१.२१
३. वा.सं.२८.१०
४. वा.सं.२१.३९
५. वा.सं.२८.३३

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

६८. देवम्बर्हिर्व्वारितीनान्देवमिन्द्रमवर्द्धयत्॥ स्वासस्थमिन्द्रेणा-सन्नमन्न्या बर्हीꣳष्यभ्यभूद्द्वसुवनें व्वसुधेयस्य व्वेतु यजं॥[१]

६९. देवम्बर्हिर्व्वारितीनामद्ध्वरेस्तीर्ण्णमश्विभ्यामूर्णम्म्रदाः सरस्वत्त्या स्योनमिन्द्र ते सदः॥ ईशायै मन्न्युꣳ राजानम्बर्हिषा दधुरिन्द्रियँ व्वसुवनें व्वसुधेयस्य व्यन्तु यजं॥[२]

७०. देवम्बर्हिर्व्वारितीनान्देवमिन्द्रँ व्वयोधसन्देवन्देवमवर्द्धयत्॥ ककुभाच्छन्दसेन्द्रियँ य्यशऽ इन्द्रे व्वयो दधद्द्वसुवनें व्वसुधेयस्य व्वेतु यजं॥[३]

७१. स्वाहा यज्ञँ व्वरुणः सुक्षत्रो भेषजङ्करत्॥ अतिच्छन्दाऽ इन्द्रियम्बृहदृषभो गौर्व्वयो दधुः॥[४]

७२. होता यक्षदिन्द्रꣳ स्वाहाज्ज्यस्य स्वाहा मेदसः स्वाहा स्तोकानाꣳ स्वाहा स्वाहाकृतीनाꣳ स्वाहा हव्यसूक्तीनाम्॥ स्वाहा देवाऽ आज्ज्यपा जुषाणाऽ इन्द्रऽ आज्ज्यस्य व्यन्तु होतर्य्यजं॥[५]

---

१. वा.सं.२८.२१
२. वा.सं.२१.५७
३. वा.सं.२८.४४
४. वा.सं.२१.२२
५. वा.सं.२८.११

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

७३. होता यक्षदग्निꣳ स्वाहाज्ज्यस्य स्तोकानाꣳ स्वाहा मेदसाम्पृथक्स्वाहाच्छागमश्विभ्याꣳ स्वाहा मेषꣳ सरस्वत्यै स्वाहऽ ऋषभमिन्द्राय सिꣳहाय सहसऽइन्द्रियꣳ स्वाहाग्निन्न भेषजꣳ स्वाहा सोममिन्द्रियꣳ स्वाहेन्द्रꣳ सुत्रामाणꣳ सवितारँ व्वरुणम्भिषजाम्पतिꣳ स्वाहा व्वनस्पतिम्प्रियम्पाथो न भेषजꣳ स्वाहा देवाऽ आज्ज्यपा जुषाणोऽ अग्निर्भेषजम्पयः सोमः परिस्रुता घृतम्मधु व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[1]

७४. होता यक्षत्त्स्वाहाकृतीरग्निङ्गृहपतिम्पृथग्व्वरुणम्भेष-जङ्कविङ्क्षत्रमिन्द्रँ व्वयोधसम् ॥ अतिच्छन्दसञ्छन्दऽ इन्द्रियम्बृहदृषभङ्गाँ व्वयो दधद्व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[2]

७५. देवोऽ अग्निः स्विष्टकृद् देवमिन्द्रमवर्द्धयत् ॥ स्विष्टङ्कुर्व्वन्त्स्विष्टकृत्स्विष्टमद्य करोतु नो व्वसुवने व्वसुधेयस्य व्वेतु यज॥[3]

७६. देवोऽ अग्निः स्विष्टकृद् देवान्यक्षद्यथायथꣳ होताराविन्द्रमश्विना व्वाचा व्वाचꣳ सरस्वतीमग्निꣳ सोमꣳ स्विष्टकृत्स्विष्टऽ इन्द्रः सुत्रामा सविता व्वरुणो भिषगिष्टो देवो व्वनस्पतिः स्विष्टा देवाऽ आज्ज्यपाः स्विष्टोऽ अग्निरग्निना होता होत्रे स्विष्टकृद्यशो न दधदिन्द्रियमूर्ज्जमपचितिꣳ स्वधाँ व्वसुवने व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[4]

---

१. वा.सं.२१.४०
२. वा.सं.२८.३४
३. वा.सं.२८.२२
४. वा.सं.२१.५८

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

७७. देवोऽ अग्निः स्विष्टकृद्देवमिन्द्रँ व्वयोधसन्देवो देवमवर्द्धयत्॥ अतिच्छन्दसाच्छन्दसेन्द्रियङ्क्षत्रमिन्द्रे व्वयो दधद्वसुवने व्वसुधेयस्य व्वेतु यज॥[१]

७८. अग्निमद्य होतारमवृणीतायँय्यजमानः पचन्पक्तीः पचन्पुरोडाशम्बध्नन्निन्द्रायच्छागम्॥[२]

७९. अग्निमद्य होतारमवृणीतायँय्यजमानः पचन्पक्तीः पचन्पुरोडाशान्बध्नन्नश्विभ्याञ्छागꣳ सरस्वत्यै मेषमिन्द्रायऽ ऋषभꣳ सुन्वन्नश्विभ्याꣳ सरस्वत्याऽ इन्द्राय सुत्राम्णे सुरासोमान्॥[३]

८०. अग्निमद्य होतारमवृणीतायँय्यजमानः पचन्पक्तीः पचन्पुरोडाशम्बध्नन्निन्द्राय व्वयोधसेच्छागम्॥[४]

८१. सूपस्थाऽ अद्य देवो व्वनस्पतिरभवदिन्द्रायच्छागेन॥[५]

८२. सूपस्थाऽ अद्य देवो व्वनस्पतिरभवदश्विभ्याञ्छागेन सरस्वत्यै मेषेणेन्द्रायऽ ऋषभेणाक्षँस्तान्मेदस्तः प्प्रति पचताग्गृभीषतावीवृधन्त पुरोडाशैरपुरश्विना सरस्वतीन्द्रः सुत्रामा सुरासोमान् ॥[६]

---

१. वा.सं.२८.४५
२. वा.सं.२८.२३
३. वा.सं.२१.५९
४. वा.सं.२८.४६
५. वा.सं.२८.२३
६. वा.सं.२१.६०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

८३. सूपस्त्थाऽ अद्द्य देवो व्वनस्प्पतिर्रभवदिन्द्राय व्वयोधसेच्छागेन॥[1]

८४. अघत्तम्मेदस्त्तः प्प्रति पचताग्ग्रभीदवीवृधत्त्पुरोडाशेन॥[2]

८५. अघत्तम्मेदस्त्तः प्प्रति पचताग्ग्रभीदवीवृधत्त्पुरोडाशेन॥[3]

८६. त्वामद्द्यऽ ऋषे॥[4]

८७. त्वामद्द्यऽ ऋषऽ आर्षेयऽ ऋषीणान्नपादवृणीतायँय्यजमानो बहुब्भ्यऽ आ सङ्गतेब्भ्यऽ एष मे देवेषु व्वसु व्वार्य्यायक्क्ष्यतऽ इति ता या देवा देव दानान्न्यदुस्त्तान्न्यस्म्माऽ आ च शास्स्वा च गुरस्वेषितश्च्च होतरसि भद्द्रवाच्च्यायप्प्रेषितो मानुषः सूक्त्तवाकाय सूक्त्ताब्ब्रूहि॥[5]

८८. त्वामद्द्यऽ ऋषे॥[6]

इति सप्ततन्तुग्रथिता शृङ्खला

---

१. वा.सं.२८.४६
२. वा.सं.२८.२३
३. वा.सं.२८.४६
४. वा.सं.२८.२३
५. वा.सं.२१.६१
६. वा.सं.२८.४६

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एकादशतन्तुग्रथिता शृङ्खला

१. समिद्धोऽ अग्निः समिधा सुसमिद्धो व्वरेण्यः॥ गायत्रीच्छन्दऽ इन्द्रियन्त्र्यविर्ग्गौर्व्वयो दधुः॥[१]

२. समिद्धऽ इन्द्रऽ उषसामनीके पुरोरुचा पूर्व्वकृद्वावृधानः॥ त्रिभिर्द्देवैस्त्रिꣳशता व्वज्रबाहुर्ज्जघान व्वृत्रँ व्वि दुरो व्ववार॥[२]

३. समिद्धोऽ अग्निरश्श्विना तप्तो घर्म्मो व्विराट्सुतः॥ दुहे धेनुः सरस्वती सोमꣳ शुक्रमिहेन्द्रियम्॥[३]

४. ऊर्द्ध्वाऽ अस्य समिधो भवन्त्यूर्द्ध्वा शुक्रा शोचीꣳष्यग्ग्नेः॥ द्युमत्तमा सुप्प्रतीकस्य सूनोः॥[४]

५. समिद्धोऽ अद्य मनुषो दुरोणे देवो देवान्न्यजसि जातवेदः॥ आ च व्वह मित्रमहश्चिकित्त्वान्त्वन्दूतः कविरसिप्प्रचेताः॥[५]

६. होता यक्क्षत्त्समिधेन्द्रमिडस्प्पदे नाभा पृथिव्व्याऽ अधि॥ दिवो व्वर्ष्मन्त्समिद्ध्यतऽ ओजिष्ठश्चर्षणीसहाँ व्वेत्त्वाज्ज्यस्य होतर्व्वज॥[६]

---

१. वा.सं. २१.१२
२. वा.सं. २०.३६
३. वा.सं. २०.५५
४. वा.सं. २७.११
५. वा.सं. २९.२५
६. वा.सं. २८.०१

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

७. होता यक्षत्त्समिधाग्निमिडस्प्पदेश्विनेन्द्रꣳ सरस्वतीमजो धूम्रो न गोधूमैः कुवलैर्ब्भेषजम्मधु शष्प्पैर्न्न तेजऽ इन्द्रियम्पयः सोमः परिस्रुता घृतम्मधु व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[१]

८. होता यक्षत्त्समिधानम्महद्यशः सुसमिद्धं व्वरेण्ण्यमग्निमिन्द्रं व्वयोधसम्॥ गायत्रीञ्छन्दऽ इन्द्रियन्त्र्यविङ्गां व्वयो दधद्वेत्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[२]

९. देवम्बर्हिरिन्द्रꣳ सुदेवन्देवैर्व्वीरवत्स्तीर्ण्णं व्वेद्यामवर्द्धयत् ॥ व्वस्तोर्व्वृतम्प्राक्क्तोर्भृतꣳ राया बर्हिष्मतोत्त्यगाद्वसुवने व्वसुधेयस्य व्वेतु यज॥[३]

१०. देवम्बर्हिः सरस्वती सुदेवमिन्द्रेऽ अश्विना॥

तेजो न चक्षुरक्ष्योर्ब्बर्हिषा दधुरिन्द्रियं व्वसुवने व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[४]

११. देवम्बर्हिर्व्वयोधसन्देवमिन्द्रमवर्द्धयत्॥ गायत्र्याच्छन्दसेन्द्रियञ्चक्षुरिन्द्रे व्वयो दधद्वसुवने व्वसुधेयस्य व्वेतु यज॥[५]

---

१. वा.सं.२१.२९
२. वा.सं.२८.२४
३. वा.सं.२८.१२
४. वा.सं.२१.४८
५. वा.सं.२८.३५

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१२. तनूनपाच्छुचिव्व्रतस्तनूपाश्च्च सरस्वती॥ उष्णिहाच्छन्दऽ
इन्द्रियन्दित्त्यवाड्ङ्गौर्व्वयो दधुः॥[१]

१३. नराशꣳस प्रति शूरो मिमानस्तनूनपात्प्रति यज्ञस्य धाम॥
गोभिर्व्वपावान्मधुना समञ्जन्हिरण्ण्यैश्च्चन्द्री यजति प्रचेताः॥[२]

१४. तनूपा भिषजा सुतेऽश्विनोभा सरस्वती॥ मद्ध्वा रजाꣳसीन्द्रिय-
मिन्द्राय पथिभिर्व्वहान्॥[३]

१५. तनूनपादसुरो व्विश्श्ववेदा देवो देवेषु देवः॥ पथोऽ अनक्तु
मद्ध्वा घृतेन॥[४]

१६. तनूनपात्पथऽ ऋतस्य यानान्मद्ध्वा समञ्जन्त्स्वदया सुजिह्व॥
मन्मानि धीभिरुत यज्ञमृन्धन्देवत्रा च कृणुह्यध्वरन्नः॥[५]

१७. होता यक्षत्तनूनपातमूतिभिर्ज्जेतारमपराजितम्॥ इन्द्रन्देवꣳ
स्वर्व्विदम्पथिभिर्म्मधुमत्तमैर्न्नराशꣳसेन तेजसा व्वेत्त्वाज्ज्यस्य
होतर्व्यज॥[६]

---

१. वा.सं.२१.१३
२. वा.सं.२०.३७
३. वा.सं.२०.५६
४. वा.सं.२७.१२
५. वा.सं.२९.२६
६. वा.सं.२८.२

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१८. होता यक्षत्तनूनपात्सरस्वतीमविर्म्मेषो न भेषजम्पथा मधुमता भरन्नश्शिवनेन्द्राय व्वीर्य्यम्बदरैरुपवाकाभिर्भेषजन्तोक्मभिः पयः सोमः परिस्रुता घृतम्मधु व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[1]

१९. होता यक्षत्तनूनपातमुद्भिदं य्यङ्गर्ब्भमदितिर्द्दधे शुचिमिन्द्रं व्वयोधसम्॥ उष्णिहञ्छन्दऽ इन्द्रियन्दित्यवाहङ्गां व्वयो दधद्वेत्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[2]

२०. देवीर्द्वारऽ इन्द्रꣳ सङ्घाते व्वीड्वीर्य्यामन्नवर्द्धयन् ॥ आ वत्सेन तरुणेन कुमारेण च मीवतापार्व्वाणꣳ रेणुकककाटन्नुदन्ताँ व्वसुवने व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[3]

२१. देवीर्द्वारोऽ अश्शिवना भिषजेन्द्रे सरस्वती॥ प्राणन्न व्वीर्य्यन्नसिद्द्वारो दधुरिन्द्रियँ व्वसुवने व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[4]

२२. देवीर्द्वारो व्वयोधसꣳ शुचिमिन्द्रमवर्द्धयन्॥ उष्णिहाच्छन्दसेन्द्रियम्प्राणमिन्द्रे व्वयो दधद्वसुवने व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[5]

२३. इडाभिरग्निरीड्यः सोमो देवोऽ अमर्त्त्यः॥ अनुष्टुप्छन्दऽ-इन्द्रियम्पञ्चाविर्ग्गौर्व्वयो दधुः॥[6]

---

[1] वा.सं.२१.३०
[2] वा.सं.२८.२५
[3] वा.सं.२८.१३
[4] वा.सं.२१.४९
[5] वा.सं.२८.३६
[6] वा.सं.२१.१४

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

२४. ईडितो देवैर्हरिवाँ२ऽ अभिष्टिराजुह्वानो हविषा शर्द्धमानः॥
पुरन्दरो गोत्रभिद्वज्रबाहुरा यातु यज्ञमुप नो जुषाणः॥[१]

२५. आजुह्वाना सरस्वतीन्द्रायेन्द्रियाणि वीर्यम्॥ इडाभिरश्विनाविषꣳ
समूर्जꣳ सꣳ रयिन्दधुः॥[२]

२६. अच्छायमेति शवसा घृतेनेडानो वह्निर्नमसा॥ अग्निꣳ स्रुचोऽ
अध्वरेषु प्रयत्सु॥[३]

२७. आजुह्वानऽ ईड्यो वन्द्यश्चा याह्यग्ने वसुभिः सजोषाः॥
त्वन्देवानामसि यह्व होता सऽ एनान्यक्षीषितो यजीयान्॥[४]

२८. होता यक्षदिडाभिरिन्द्रमीडितमाजुह्वानममर्त्यम्॥ देवो देवैः
सवीर्यो वज्रहस्तः पुरन्दरो वेत्वाज्यस्य होतर्यज॥[५]

२९. होता यक्षदिडेडितऽ आजुह्वानः सरस्वतीमिन्द्रम्बलेन
वर्द्धयन्नृषभेण गवेन्द्रियमश्विनेन्द्राय भेषजँयवैः कर्कन्धुभिर्मधु
लाजैर्न मासरम्पयः सोमः परिस्रुता घृतम्मधु व्यन्त्वाज्यस्य
होतर्यज॥[६]

---

१. वा.सं.२०.३८
२. वा.सं.२०.५८
३. वा.सं.२७.१४
४. वा.सं.२९.२८
५. वा.सं.२८.३
६. वा.सं.२१.३२

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

३०. होता यक्षदीडेन्यमीडितँ व्वृत्रहन्तममिडाभिरीड्यꣳ सहः सोममिन्द्रँ व्वयोधसम्॥ अनुष्टुभञ्छन्दऽ इन्द्रियम्पञ्चाविङ्गाँ व्वयो दधद्वेत्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[1]

३१. देवीऽ उषासानक्क्तेन्द्रँर्यज्ञेप्प्रयत्यह्वेताम्॥ दैवीर्विशः प्प्रायासिष्टाꣳ सुप्प्रीते सुधिते व्वसुवनेँ व्वसुधेयस्य वीताँय्यज॥[2]

३२. देवीऽ उषासावश्विना सुत्रामेन्द्रे सरस्वती॥ बलन्न व्वाचमास्यऽ उषाब्भ्यान्दधुरिन्द्रियँ व्वसुवने व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[3]

३३. देवीऽ उषासानक्क्ता देवमिन्द्रँ व्वयोधसन्देवी देवमवर्द्धताम्॥ अनुष्टुभाच्छन्दसेन्द्रियम्बलमिन्द्रे व्वयो दधद्वसुवने व्वसुधेयस्य वीताँय्यज॥[4]

३४. सुबर्हिरग्निः पूषण्वान्त्स्तीर्ण्णबर्हिरमर्त्त्यः॥ बृहतीच्छन्दऽ इन्द्रियन्त्रिवत्सो गौर्व्वयो दधुः॥[5]

३५. जुषाणो बर्हिर्हरिवान्नऽ इन्द्रः प्प्राचीनꣳ सीदत्प्रदिशा पृथिव्याः॥ उरुप्प्रथाः प्रथमानꣳ स्योनमादित्यैरक्तँ व्वसुभिः सजोषाः॥[6]

---

१. वा.सं.२८.२६
२. वा.सं.२८.१४
३. वा.सं.२१.५०
४. वा.सं.२८.३७
५. वा.सं.२१.१५
६. वा.सं.२०.३९

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

३६. अश्विना नमुचेः सुतꣳ सोमꣳ शुक्रम्परिस्रुता॥ सरस्वती तमाभरद्बर्हिषेन्द्राय पातवे॥[१]

३७. स यक्षदस्य महिमानमग्नेः सऽ ईम्मन्द्रा सुप्प्रयसः। व्वसुश्चेतिष्ठो व्वसुधातमश्च॥[२]

३८. प्राचीनम्बर्हिः प्प्रदिशा पृथिव्या व्वस्तोरस्या व्वृज्ज्यतेऽ अग्ग्रेऽ अह्नाम्॥ व्व्युप्प्रथते व्वितरँ व्वरीयो देवेब्भ्योऽ अदितये स्योनम्॥[३]

३९. होता यक्षद्बर्हिषीन्द्रन्निषद्वरँ व्वृषभन्नर्य्यापसम्॥ व्वसुभी रुद्रैरादित्त्यैः सयुग्भिर्ब्बर्हिरासदद्वेत्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[४]

४०. होता यक्षद्बर्हिरूर्णम्म्रदा भिषङ्ङ्नासत्त्याभिषजाश्विनाश्वा शिशुमती भिषग्ग्धेनुः सरस्वती भिषग्ग्दुहऽ इन्द्राय भेषजम्पयः सोमः परिस्रुता घृतम्मधु व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[५]

४१. होता यक्षत्सुबर्हिषम्पूषण्वन्तममर्त्त्यꣳ सीदन्तम्बर्हिषिप्प्रियेमृतेन्द्रँ व्वयोधसम्॥ बृहतीञ्छन्दऽ इन्द्रियन्त्रिवत्सङ्गाँ व्वयो दधद्वेत्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[६]

---

१. वा.सं.२०.५९
२. वा.सं.२७.१५
३. वा.सं.२९.२९
४. वा.सं.२८.४
५. वा.सं.२१.३३
६. वा.सं.२८.२७

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

४२. देवी जोष्ट्री व्वसुधिती देवमिन्द्रमवर्द्धताम्॥ अयाव्व्यन्न्या-घाद्द्वेषाॅंस्यान्न्या व्वक्षद्द्वसु व्वार्व्याणि यजमानाय शिक्षिते व्वसुवनें व्वसुधेयस्य वीताँव्यज॥[१]

४३. देवी जोष्ट्री सरस्वत्त्यश्शिवनेन्द्रमवर्द्धयन्॥ श्रोत्रन्न कर्णयोर्व्यशो जोष्ट्रीब्भ्यान्दधुरिन्द्रियँ व्वसुवनें व्वसुधेयस्य व्व्यन्तु यज॥[२]

४४. देवी जोष्ट्री व्वसुधिती देवमिन्द्रँ व्वयोधसन्देवी देवमवर्द्धताम्॥ बृहत्त्याच्छन्दसेन्द्रियॅं श्रोत्रमिन्द्रे व्वयो दधद्द्वसुवनें व्वसुधेयस्य व्वीताँव्यज॥[३]

४५. दुरो देवीर्द्दिशो महीर्ब्रह्मा देवो बृहस्प्पतिः॥ पङ्क्तिश्च्छन्दऽ इहेन्द्रियन्तुर्य्यवाड्गौर्व्वयो दधुः॥[४]

४६. इन्द्रन्दुरः कवष्ष्यो धावमाना व्वृषाणॅंव्यन्तु जनयः सुपत्नीः॥ द्वारो देवीरभितो व्विश्श्रयन्ताॅं सुवीरा व्वीरम्प्रथमाना महोभिः॥[५]

४७. कवष्ष्यो न व्व्यचस्वतीरश्शिवब्भ्यान्न दुरो दिशः॥ इन्द्रो न रोदसीऽ उभे दुहे कामान्त्सरस्वती॥[६]

---

१. वा.सं.२८.१५
२. वा.सं.२१.५१
३. वा.सं.२८.३८
४. वा.सं.२१.१६
५. वा.सं. २०.४०
६. वा.सं.२०.६०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

४८. द्वारौ देवीरन्न्वस्य व्विश्श्वै व्व्रता ददन्तेऽ अग्ग्नेः॥ उरुव्व्यचसो धाम्म्ना पत्त्यमानाः॥[1]

४९. व्व्यचस्वतीरुर्व्विया व्विश्श्रयन्ताम्पतिब्भ्यो न जनयः शुम्भमानाः॥ देवीर्द्द्वारो बृहतीर्व्विश्श्वमिन्न्वा देवेब्भ्यो भवत सुप्प्रायणाः॥[2]

५०. होता यक्क्षद्दोजो न व्वीर्य्यꣳ सहोद्द्वारऽ इन्द्रमवर्द्धयन्॥ सुप्प्रायणाऽ अस्स्मिन्न्यज्ज्ञे व्विश्श्रयन्तामृतावृधोद्द्वारऽ इन्द्राय मीढुषे व्व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[3]

५१. होता यक्क्षद्दुरो दिशः कवष्ष्यो न व्व्यचस्वतीरश्श्विवब्भ्यान्न दुरो दिशऽ इन्द्रो न रोदसी दुघे दुहे धेनुः सरस्वत्त्यश्श्विनेन्द्राय भेषजꣳ शुक्क्रन्नज्ज्योतिरिन्द्रियम्पयः सोमः परिस्स्रुता घृतम्मधु व्व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[4]

५२. होता यक्क्षद्द्व्यचस्वतीः सुप्प्रायणाऽ ऋतावृधो द्द्वारो देवीर्हिरण्ण्ययीर्ब्ब्रह्माणमिन्द्रं व्वयोधसम्॥ पङ्क्तिञ्छन्दऽ इहेन्द्रियन्तुर्य्यवाहङ्गां व्वयो दधद्द्व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[5]

५३. देवीऽ ऊर्ज्जाहुती दुघे सुदुघे पयसेन्द्रमवर्द्धताम्॥ इषमूर्ज्जमन्न्या व्वक्क्षत्सग्ग्धꣳ सपीतिमन्न्या नवेन पूर्व्वन्दयमाने पुराणेन

---

१. वा.सं.२७.१६
२. वा.सं.२९.३०
३. वा.सं.२८.५
४. वा.सं.२१.३४
५. वा.सं.२८.२८

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नवमधातामूर्ज्जमूर्ज्जाहुतीऽ ऊर्ज्जयमाने व्वसु व्वार्य्याणि यजमानाय शिक्षिते व्वसुवने व्वसुधेयस्य व्वीताँय्यज॥[१]

५४. देवीऽ ऊर्ज्जाहुती दुघे सुदुघेन्द्रे सरस्वत्त्यश्विना भिषजावतः॥ शुक्क्रन्नज्ज्योतिस्तनयोराहुती धत्तऽ इन्द्रियँ व्वसुवने व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[२]

५५. देवीऽ ऊर्ज्जाहुती दुघे सुदुघे पयसेन्द्रँ व्वयोधसन्देवी देवमवर्द्धताम्॥ पङ्क्त्याच्छन्दसेन्द्रियꣳ शुक्क्रमिन्द्रे व्वयो दधद्वसुवने व्वसुधेयस्य व्वीताँय्यज॥[३]

५६. उषे यह्वी सुपेशसा व्विश्श्वे देवाऽ अमर्त्त्याः ॥ त्रिष्टुप्छन्दऽ इहेन्द्रिहम्पष्ठ्वाड्ङ्गौर्व्वयो दधुः॥[४]

५७. उषासानक्क्ता बृहती बृहन्तम्पयस्वती सुदुघे शूरमिन्द्रम् ॥ तन्तुन्ततम्पेशसा सँव्वयन्ती देवानान्देवँय्यजतः सुरुक्क्मे॥[५]

५८. उषासा नक्क्तमश्श्विना दिवेन्द्रꣳ सायमिन्द्रियैः॥ सञ्जानाने सुपेशसा समञ्जाते सरस्वत्त्या॥[६]

---

१. वा.सं.२८.१६
२. वा.सं.२१.५२
३. वा.सं.२८.३९
४. वा.सं.२१.१७
५. वा.सं.२०.४१
६. वा.सं.२०.६१

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

५९. तेऽ अस्य योषणे दिव्व्ये न योनाऽ उषासानक्ता॥
इमँय्यज्ञमवतामद्ध्वरन्नः॥[१]

६०. आ सुष्वयन्ती यजतेऽ उपाकेऽ उषासानक्ता सदतान्नि योनौ॥
दिव्व्ये योषणे बृहती सुरुक्क्मेऽ अधिश्श्रियद्धं शुक्क्रपिशन्दधाने॥[२]

६१. होता यक्क्षदुषेऽ इन्द्रस्य धेनू सुदुघे मातरा मही॥ सवातरौ न तेजसा
व्वत्समिन्द्रमवर्द्धताँ व्वीतामाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[३]

६२. होता यक्क्षत्सुपेशसो नक्क्तन्दिवाश्श्विना समञ्जाते
सरस्वत्त्यात्त्विषिमिन्द्रे न भेषजछं श्येनो न रजसा हृदाश्श्रिया न
मासरम्पयः सोमः परिस्रुता घृतम्मधु व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[४]

६३. होता यक्क्षत्सुपेशसा सुशिल्प्ये बृहतीऽ उभे नक्क्तोषासा न दर्शते
व्विश्श्वमिन्द्रँ व्वयोधसम्॥ त्रिष्टुभञ्छन्दऽ इहेन्द्रियम्पष्ठवाहङ्गाँ व्वयो
दधद्व्वीतामाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[५]

६४. देवा दैव्व्या होतारा देवमिन्द्रमवर्द्धताम् ॥ हताघशछंसावाभार्ष्टाँ
व्वसु व्वार्य्याणि यजमानाय शिक्क्षितौ व्वसुवनै व्वसुधेयस्य
व्वीताँय्यज॥[६]

---

[१] वा.सं.२७.१७
[२] वा.सं.२९.३१
[३] वा.सं.२८.६
[४] वा.सं.२१.३५
[५] वा.सं.२८.२९
[६] वा.सं.२८.१७

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

६५. देवा देवानाम्भिषजा होताराविन्द्रमश्विना॥ व्वषट्कारैः सरस्वतीत्विषिन्न हृदये मतिᳪ होतृभ्यान्दधुरिन्द्रियँ व्वसुवनें व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[1]

६६. देवा दैव्व्या होतारा देवमिन्द्रँ व्वयोधसन्देवौ देवमवर्द्धताम् । त्रिष्टुभाच्छन्दसेन्द्रियन्त्विषिमिन्द्रे व्वयो दधद्वसुवनें व्वसुधेयस्य व्वीताँय्यज॥[2]

६७. दैव्व्या होतारा भिषजेन्द्रेण सयुजा युजा॥ जगतीच्छन्दऽ इन्द्रियमनड्वान्नगौर्व्वयो दधुः॥[3]

६८. दैव्व्या मिमाना मनुषः पुरुत्रा होताराविन्द्रम्प्रथमा सुवाचा॥ मूर्द्धन्न्यज्ञस्य मधुना दधानाप्प्राचीनञ्ज्योतिर्हविषा व्वृधातः॥[4]

६९. पातन्नोऽ अश्विना दिवा पाहि नक्तᳪ सरस्वति॥ दैव्व्या होतारा भिषजा पातमिन्द्रᳪ सचा सुते॥[5]

७०. दैव्व्या होताराऽ ऊर्द्ध्वमद्ध्वरन्नोग्ग्नेर्जिह्वामभि गृणीतम्॥ कृणुतन्नः स्विष्टिम्॥[6]

---

1. वा.सं.२१.५३
2. वा.सं.२८.४०
3. वा.सं.२१.१८
4. वा.सं.२०.४२
5. वा.सं.२०.६२
6. वा.सं.२७.१८

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

७१. दैव्या होतारा प्रथमा सुवाचा मिमाना यज्ञम्मनुषो यजद्ध्यै॥ प्रचोदयन्ता व्विदथेषु कारूप्प्राचीनञ्ज्योतिः प्प्रदिशा दिशन्ता॥[1]

७२. होता यक्क्षद्दैव्या होतारा भिषजा सखाया हविषेन्द्रम्भिषजज्यतः॥ कवी देवौप्प्रचेतसाविन्द्राय धत्तऽ इन्द्रियँ व्वीतामाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[2]

७३. होता यक्क्षद्दैव्या होतारा भिषजाश्विनेन्द्रन्न जागृवि दिवा नक्तन्न भैषजैः शूषः सरस्वती भिषक्क्सीसेन दुहऽ इन्द्रियम्पयः सोमः परिस्रुता घृतम्मधु व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[3]

७४. होता यक्क्षत्त्प्रचेतसा देवानामुत्तमँय्यशो होतारा दैव्या कवी सयुजेन्द्रँ व्वयोधसम्॥ जगती ञ्छन्दऽ इन्द्रियमनड्ढाहङ्गाँ व्वयो दधद्द्वीतामाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[4]

७५. देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः पतिमिन्द्रमवर्द्धयन्। अस्पृक्षद्भारती दिवँ रुद्रैर्य्यज्ञँ सरस्वतीडा व्वसुमती गृहान्व्वसुवने व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[5]

७६. देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीरश्विनेडा सरस्वती॥ शूषन्न मद्ध्ये नाभ्यामिन्द्राय दधुरिन्द्रियँ व्वसुवने व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[6]

---

1. वा.सं.२९.३२
2. वा.सं.२८.७
3. वा.सं.२१.३६
4. वा.सं.२८.३०
5. वा.सं.२८.१८
6. वा.सं.२१.५४

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

७७. देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्व्वयोधसम्पतिमिन्द्रवर्द्धयन् ॥ जगत्याच्छन्दसेन्द्रियꣳ शूषमिन्द्रे व्वयो दधद्वसुवने व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज ॥[१]

७८. तिस्रऽ इडा सरस्वती भारती मरुतो व्विशः ॥ व्विराट्छन्दऽ इहेन्द्रियन्धेनुर्गौर्न व्वयो दधुः ॥[२]

७९. तिस्रो देवीर्हविषा व्वर्द्धमानाऽ इन्द्रञ्जुषाणा जनयो न पत्नीः । अच्छिन्नन्तन्तुम्पयसा सरस्वतीडा देवी भारती व्विश्वतूर्त्तिः ॥[३]

८०. तिस्रस्त्रेधा सरस्वत्यश्विना भारतीडा ॥ तीव्रम्परिस्रुता सोममिन्द्राय सुषुवुर्म्मदम् ॥[४]

८१. तिस्रो देवीर्ब्बर्हिरिदꣳ सदन्त्विडा सरस्वती भारती ॥ मही गृणाना ॥[५]

८२. आ नो यज्ञम्भारती तूयमेत्विडा मनुष्वदिह चेतयन्ती ॥ तिस्रो देवीर्ब्बर्हिरिदꣳ स्योनꣳ सरस्वती स्वपसः सदन्तु ॥[६]

८३. होता यक्षत्तिस्रो देवीर्न भेषजन्त्रयस्त्रिधातवोपसऽ इडा सरस्वती भारती महीः ॥ इन्द्रपत्नीर्हविष्मतीर्व्यन्त्वाज्यस्य होतर्य्यज ॥[७]

---

१. वा.सं.२८.४१
२. वा.सं.२१.१९
३. वा.सं.२०.४३
४. वा.सं.२०.६३
५. वा.सं.२७.१९
६. वा.सं.२९.३३
७. वा.सं.२८.८

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

८४. होता यक्षत्तिस्रो देवीर्न्न भेषजन्त्रयस्त्रिधातवोपसो रूपमिन्द्रे हिरण्ययमश्विनेडा न भारती व्वाचा सरस्वती महऽ इन्द्राय दुहऽइन्द्रियम्पयः सोमः परिस्रुता घृतम्मधु व्व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[१]

८५. होता यक्षत्पेशस्वतीस्तिस्रो देवीर्हिरण्ययीर्भारतीर्बृहतीर्म्महीः पतिमिन्द्रँ व्वयोधसम् ॥ व्विराजञ्छन्दऽ इहेन्द्रियन्धेनुङ्गान्न व्वयो दधद्व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[२]

८६. देवऽइन्द्रो नराशꣳसस्त्रिवरूथस्त्रिबन्धुरो देवमिन्द्रमवर्द्धयत्। शतेन शितिपृष्ठानामाहितः सहस्रेणप्प्र वर्त्तते मित्रावरुणेदस्य होत्रमर्हतो बृहस्प्पतिस्तोत्रमश्विनाद्ध्वर्य्यवँ व्वसुवने व्वसुधेयस्य व्वेतुयज॥[३]

८७. देवऽ इन्द्रो नराशꣳसस्त्रिवरूथः सरस्वत्याश्विभ्यामीयते रथः॥ रेतो न रूपममृतञ्जनित्रमिन्द्रायत्त्वष्टा दधदिन्द्रियाणि व्वसुवने व्वसुधेय व्व्यन्तु यज॥[४]

८८. देवो नराशꣳसो देवमिन्द्रँ व्वयोधसन्देवो देवमवर्द्धयत् ॥ व्विराजाच्छन्दसेन्द्रियꣳ रूपमिन्द्रे व्वयो दधद्वसुवने व्वसुधेयस्य व्वेतु यज॥[५]

---

१. वा.सं.२१.३७
२. वा.सं.२८.३१
३. वा.सं.२८.१९
४. वा.सं.२१.५५
५. वा.सं.२८.४२

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

८९. त्वष्टा तुरीपोऽ अद्भुतऽ इन्द्राग्नी पुष्टिवर्द्धना॥ द्विपदाच्छन्दऽ इन्द्रियमुक्षा गौर्न्न व्वयो दधुः॥[१]

९०. त्वष्टा दधच्छुष्ममिन्द्राय व्वृष्णेपाकोचिष्टुर्य्यशसे पुरूणि॥ व्वृषा यजन्वृषणम्भूरिरेता मूर्द्धन्यज्ञस्य समनक्तु देवान्॥[२]

९१. अश्विना भेषजम्मधु भेषजन्नः सरस्वती॥ इन्द्रेत्त्वष्टा यशः श्रियंᳬ रूपᳬरूपमधुः सुते॥[३]

९२. तन्नस्तुरीपमद्भुतम्पुरुक्षुत्त्वष्टा सुवीर्य्यम्॥ रायस्पोषँ व्विष्यतु नाभिमस्मे॥[४]

९३. यऽ इमेद्यावापृथिवी जनित्री रूपैरपिᳬशद्भुवनानि व्विश्श्वा॥ तमद्य होतरिषितो यजीयान्देवन्त्वष्टारमिह यक्षि व्विद्वान्॥[५]

९४. होता यक्षत्त्वष्टारमिन्द्रन्देवम्भिषजᳬ सुयजङ्घृतश्रियम्॥ पुरुरूपᳬ सुरेतसम्मघोनमिन्द्रायत्त्वष्टा दधदिन्द्रियाणि व्वेत्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[६]

९५. होता यक्षत्सुरेतसमृषभन्नर्य्यापसन्त्वष्टारमिन्द्रमश्विना भिषजन्न सरस्वतीमोजो न जूतिरिन्द्रियँ व्वृको न रभसो भिषग्ग्यशः सुरया

---

१. वा.सं.२१.२०
२. वा.सं.२०.४४
३. वा.सं.२०.६४
४. वा.सं.२७.२०
५. वा.सं.२९.३४
६. वा.सं.२८.९

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भेषजꣳ श्रिया न मासरम्पयः सोमः परिस्रुता घृतम्मधु व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[1]

९६. होता यक्षत्सुरेतसन्त्वष्टारम्पुष्टिवर्द्धनꣳ रूपाणि बिभ्रतम्पृथक्पुष्टिमिन्द्रं व्वयोधसम्॥ द्विपदञ्छन्दऽ इन्द्रियमुक्षाणङ्गान्न व्वयो दधद्व्वेत्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[2]

९७. देवो देवैर्व्वनस्पतिर्हिरण्यपर्णो मधुशाखः सुपिप्पलो देवमिन्द्रमवर्द्धयत्॥ दिवमग्रेणास्पृक्षदान्तरिक्षम्पृथिवी-मदृꣳहीद्व्वसुवने व्वसुधेयस्य व्वेतु यज॥[3]

९८. देवो देवैर्व्वनस्पतिर्हिरण्यपर्णोऽ अश्विभ्याꣳ सरस्वत्त्या सुपिप्पलऽ इन्द्राय पच्च्यते मधु॥ ओजो न जूर्तिर्ऋषभो न भामं व्वनस्पतिर्नो दधदिन्द्रियाणि व्वसुवने व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[4]

९९. देवो व्वनस्पतिर्देवमिन्द्रं व्वयोधसन्देवो देवमवर्द्धयत्॥ द्विपदाच्छन्दसेन्द्रियम्भगमिन्द्रे व्वयो दधद्व्वसुवने व्वसुधेयस्य व्वेतु यज॥[5]

१००. शमिता नो व्वनस्पतिः सविताप्रसुवन्भगम् ॥ ककुप्छन्दऽ इहेन्द्रियं व्वशा व्वेहद्व्वयो दधुः ॥[6]

---

1. वा.सं.२१.३८
2. वा.सं.२८.३२
3. वा.सं.२८.२०
4. वा.सं.२१.५६
5. वा.सं.२८.४३
6. वा.सं.२१.२१

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१०१. व्वनस्प्पतिरवसृष्टो न पाशैस्त्मन्न्या समञ्जञ्छमिता न देवः॥ इन्द्रस्य हव्व्यैर्ज्जठरम्पृणानः स्वदाति यज्ञम्मधुना घृतेन॥[1]

१०२. ऋतुथेन्द्रो व्वनस्प्पतिः शशमानः परिस्रुता॥ कीलालमश्श्विभ्याम्मधु दुहे धेनुः सरस्वती॥[2]

१०३. व्वनस्प्पतेव सृजा रराणस्त्मना देवेषु॥ अग्निर्हव्यᳬ शमिता सूदयाति॥[3]

१०४. उपावसृजत्त्मन्न्या समञ्जन्देवानाम्पाथऽ ऋतुथा हवीᳬषि॥ व्वनस्प्पतिः शमिता देवोऽ अग्निः स्वदन्तु हव्यम्मधुना घृतेन॥[4]

१०५. होता यक्क्षद्द्वनस्प्पतिᳬ शमितारᳬ शतक्क्रतुन्धियो जोष्ट्टारमिन्द्रियम् ॥ मद्ध्वा समञ्जन्पथिभिः सुगेभिः स्वदाति यज्ञम्मधुना घृतेन व्वेत्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[5]

१०६. होता यक्क्षद्द्वनस्प्पतिᳬ शमितारᳬ शतक्क्रतुम्भीमन्न मन्न्युᳬ राजानँ व्व्याग्घ्रन्नमसाश्श्विना भामᳬ सरस्वती भिषगिन्द्राय दुहऽ इन्द्रियम्पयः सोमः परिस्रुता घृतम्मधु व्व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[6]

१०७. होता यक्क्षद्द्वनस्प्पतिᳬ शमितारᳬ शतक्क्रतुᳬ हिरण्ण्यपर्ण्णमुक्क्थिनᳬ रशनाम्बिभ्रतँ व्वशिम्भगमिन्द्रँ

---

१. वा.सं.२०.४५
२. वा.सं.२०.६५
३. वा.सं.२७.२१
४. वा.सं.२९.३५
५. वा.सं.२८.१०
६. वा.सं.२१.३९

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्वयोधसम्॥ ककुभञ्छन्दऽ इहेन्द्रियँ व्वशाँ व्वेहतङ्गाँ व्वयो दधद्द्वेत्त्वाज्ज्यस्य होतर्व्यज॥[1]

१०८. देवम्बर्हिर्व्वारितीनान्देवमिन्द्रमवर्द्धयत्॥ स्वासस्थमिन्द्रेणासन्नमन्या बर्हीᳬंष्यभ्यभूद्द्वसुवनै व्वसुधेयस्य व्वेतु यज॥[2]

१०९. देवम्बर्हिर्व्वारितीनामद्ध्वरेस्त्तीर्ण्णमश्विभ्यामूर्ण्णम्प्रदाः सरस्वत्त्या स्योनमिन्द्र ते सदः॥ ईशायै मन्न्युः राजानम्बर्हिषा दधुरिन्द्रियँ व्वसुवनै व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[3]

११०. देवम्बर्हिर्व्वारितीनान्देवमिन्द्रँ व्वयोधसन्देवन्देवमवर्द्धयत्॥ ककुभाच्छन्दसेन्द्रियँ यशऽ इन्द्रे व्वयो दधद्द्वसुवनै व्वसुधेयस्य व्वेतु यज॥[4]

१११. स्वाहा यज्ञँ व्वरुणः सुक्षत्रो भैषजङ्करत्॥ अतिच्छन्दाऽ इन्द्रियम्बृहदृषभो गौर्व्वयो दधुः॥[5]

११२. स्तोकानामिन्दुम्प्रति शूरऽ इन्द्रो व्वृषायमाणो व्वृषभस्तुराषाट् ॥ घृतप्प्रुषा मनसा मोदमानाः स्वाहा देवाऽ अमृता मादयन्ताम् ॥[6]

---

१. वा.सं.२८.३३
२. वा.सं.२८.२१
३. वा.सं.२१.५७
४. वा.सं.२८.४४
५. वा.सं.२१.२२
६. वा.सं.२०.४६

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

११३. गोभिर्न्न सोर्ममश्शिवना मासरिण परिस्रुता॥ सर्मधातꣳ सरस्वत्त्या स्वाहेन्द्रे सुतम्मर्धु॥[१]

११४. अग्ग्ने स्वाहा कृणुहि जातवेदऽ इन्द्राय हव्व्यम् ॥ व्विश्श्वे देवा हविरिदञ्जुषन्ताम्॥[२]

११५. सद्द्यो जातो व्व्यमिमीत यज्ञमग्ग्निर्द्देवानामभवत्पुरोगाः। अस्य होतुः प्प्रदिश्यृतस्य व्वाचि स्वाहाकृतꣳ हविरदन्तु देवाः॥[३]

११६. होता यक्क्षदिन्द्रꣳ स्वाहाज्ज्यस्य स्वाहा मेर्दसः स्वाहा स्तोकानाꣳ स्वाहा स्वाहाकृतीनाꣳ स्वाहा हव्व्यसूक्त्तीनाम्॥ स्वाहा देवाऽ आज्ज्यपा जुषाणाऽ इन्द्रऽ आज्ज्यस्य व्व्यन्तु होतर्य्यज॥[४]

११७. होता यक्क्षदग्ग्निꣳ स्वाहाज्ज्यस्य स्तोकानाꣳ स्वाहा मेर्दसाम्पृथक्क्स्वाहाच्छागमश्शिवब्भ्याꣳ स्वाहा मेषꣳ सरस्वत्त्यै स्वाहऽ ऋषभमिन्द्राय सिꣳहाय सहसऽइन्द्रियꣳ स्वाहाग्ग्निन्न भैषजꣳ स्वाहा सोममिन्द्रियꣳ स्वाहेन्द्रꣳ सुत्रामाणꣳ सवितारँ व्वरुणम्भिषजाम्पतिꣳ स्वाहा व्वनस्प्पतिम्प्रियम्पाथो न भैषजꣳ स्वाहा देवाऽ आज्ज्यपा जुषाणोऽ अग्ग्निर्ब्भेषजम्पयः सोमः परिस्रुता घृतम्मधु व्यन्त्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[५]

---

१. वा.सं.२०.६६
२. वा.सं.२७.२२
३. वा.सं.२९.३६
४. वा.सं.२८.११
५. वा.सं.२१.४०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

११८. होता यक्षत्त्स्वाहाकृतीरग्ग्निङ्गृहपतिम्पृथग्ग्वरुणम्भेषजङ्क-विङ्क्षत्रमिन्द्रँ व्वयोधसम् ॥ अतिच्छन्दसञ्छन्दऽ इन्द्रियम्बृहदृषभङ्गाँ व्वयो दधद्व्यन्त्वाज्ज्यस्य होतर्य्यज॥[१]

११९. देवोऽ अग्ग्निः स्विष्टकृद् देवमिन्द्रमवर्द्धयत् ॥ स्विष्टङ्कुर्व्वन्त्स्विष्टकृत्त्स्विष्टमद्य करोतु नो व्वसुवनें व्वसुधेयस्य व्वेतु यज॥[२]

१२०. देवोऽ अग्ग्निः स्विष्टकृद् देवान्न्यक्षद्यथायथꣳ होताराविन्द्रमश्श्विना व्वाचा व्वाचꣳ सरस्वतीमग्ग्निꣳ सोमꣳ स्विष्टकृत्त्स्विष्टऽ इन्द्रः सुत्रामा सविता व्वरुणो भिषगिष्टो देवो व्वनस्प्पतिः स्विष्टा देवाऽ आज्ज्यपाः स्विष्टोऽ अग्ग्निरग्ग्निना होता होत्रे स्विष्टकृद्यशो न दधदिन्द्रियमूर्ज्जमपचितिꣳ स्वधाँ व्वसुवनें व्वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥[३]

१२१. देवोऽ अग्ग्निः स्विष्टकृद्देवमिन्द्रँ व्वयोधसन्देवो देवमवर्द्धयत्॥ अतिच्छन्दसाच्छन्दसेन्द्रियङ्क्षत्रमिन्द्रे व्वयो दधद्वसुवनें व्वसुधेयस्य व्वेतु यज॥[४]

१२२. अग्ग्निमद्य होतारमवृणीतायँय्यजमानः पचन्पक्तीः पचन्पुरोडाशम्बध्नन्निन्द्रायच्छागम्॥[५]

---

[१] वा.सं.२८.३४
[२] वा.सं.२८.२२
[३] वा.सं.२१.५८
[४] वा.सं.२८.४५
[५] वा.सं.२८.२३

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१२३. अग्निमद्य होतारमवृणीतायँय्यजमानः पचन्पक्तीः पचन्पुरोडाशान्बध्नन्नश्विभ्याञ्छागः सरस्वत्यै मेषमिन्द्रायऽ ऋषभः सुन्वन्नश्विभ्याः सरस्वत्याऽ इन्द्राय सुत्राम्णे सुरासोमान्॥[1]

१२४. अग्निमद्य होतारमवृणीतायँय्यजमानः पचन्पक्तीः पचन्पुरोडाशम्बध्नन्निन्द्राय व्वयोधसेच्छागम्॥[2]

१२५. सूपस्थाऽ अद्य देवो व्वनस्पतिरभवदिन्द्रायच्छागेन॥[3]

१२६. सूपस्थाऽ अद्य देवो व्वनस्पतिरभवदश्विभ्याञ्छागेन सरस्वत्यै मेषेणेन्द्रायऽ ऋषभेणाक्षँस्तान्मेदस्तः प्रति पचताग्गृभीषतावीवृधन्त पुरोडाशैरपुरश्विना सरस्वतीन्द्रः सुत्रामा सुरासोमान् ॥[4]

१२७. सूपस्थाऽ अद्य देवो व्वनस्पतिरभवदिन्द्राय व्वयोधसेच्छागेन॥[5]

१२८. अघत्तम्मेदस्तः प्रति पचताग्ग्रभीदवीवृधत्पुरोडाशेन॥[6]

१२९. अघत्तम्मेदस्तः प्रति पचताग्ग्रभीदवीवृधत्पुरोडाशेन॥[7]

१३०. त्वामद्यऽ ऋषे॥[8]

---

१. वा.सं.२१.५९
२. वा.सं.२८.४६
३. वा.सं.२८.२३
४. वा.सं.२१.६०
५. वा.सं.२८.४६
६. वा.सं.२८.२३
७. वा.सं.२८.४६
८. वा.सं.२८.२३

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१३१. त्वाम॒द्य॒ऽ ऋ॑षऽ आर्षेयऽ ऋषीणान्नपादवृणीता॒यँव्यजमानो ब॒हु॒भ्य॒ऽ आ सङ्गतेभ्यऽ ए॒ष में दे॒वेषु॒ व्वसु॒ व्वार्य्यायक्ष्यत॒ऽ इति॒ ता या दे॒वा दे॑व॒ दाना॒न्यदु॒स्तान्यस्म्मा॒ऽ आ च॒ शास्स्वा च गुरस्वेषि॒तश्च होत॒रसि भद्र॒वाच्च्याय॒प्प्रेषि॑तो॒ मानुषः सूक्त॒वा॒काय सू॒क्ता ब्रू॒हि॥[१]

१३२. त्वाम॒द्य॒ऽ ऋ॑षे॥[२]

इत्येकादशतन्तुग्रथिता शृङ्खला

१. वा.सं.२१.६१
२. वा.सं.२८.४६

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पदानुक्रमणिका

।।श्रीगणेशाय नमः।। अथ पदानुक्रमणिकाप्रारम्भः।। हरिॐ।। इषेत्वा शतधारꣳसहस्त्रधारꣳ साव्विश्वायुः कस्त्वा प्रत्युष्टꣳरक्षो धूरसि धृष्टिरसि धिषणासि धान्यमसि संव्वपामि जनयत्यैत्वा माभेः पृथिविदेवयजन्यपाररुं गायत्रेणत्वा देवयजनमसि शेषाः षोडश[१] (कण्डिकाः) ।।अध्यायः।।१।। मं.।।१५।। ऋचः[२]।।३१।। पदसंख्या।।६१४।।

कृष्णोसि व्वीतिहोत्रन्त्वा घृताच्यस्यग्नेव्वाजजिदग्नेव्वेरु-पहूतोद्यौरेतन्ते व्वसुभ्यस्त्वा सꣳस्त्रवभागास्थ घृताचीस्थो व्वेदोसि संव्वर्चसा स्वयंभूरस्यग्नेगृहपते[३] खेरूपाण्याधत्तोर्जव्वहंतीर्मेपितॄन्।। शेषाः[४]।।१६ (कण्डिकाः)।।अ. ।।२।।मं.।।१७।।ऋचः।।३३।। सं।।६६८।।

---

१. "शेशशोडशः" इति मूले

२. अत्र मंत्रशब्देन ऋचाशब्देन च कण्डिका बोद्धव्याः। लेखकेन कृतो मंत्रर्क्शब्दयोः प्रयोगो न युज्यते। मंत्रशब्देन ग्रन्थोक्तप्रतीकानामृक्शब्देन चाध्यायान्तर्गतानां समग्रकण्डिकानामवबोधनं लेखकोभिप्रैतीति समन्वयोस्माभिः कर्तुं शक्यते।

३. "गृपते" इति मूले

४. "शेशं" इति सर्वत्राध्यायान्ते।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समिधाग्निꣳ सुसमिद्धायशोचिषऽ उप[1]त्वा भूर्भुवोग्नि-ज्योंतिरग्निर्मूर्द्धोभावामस्यप्रत्नान्तनूपाऽअग्ने सन्त्वꣳ राजन्त-मध्वराणाꣳ[2] सनोग्नेत्वꣳ सोमानꣳस्वरणं यारेवान्मानो नहितेषां तेहि कदाचन स्व:सुप्रजाऽ आगन्म गृहामोपहूताऽइह प्रघासिनोहवामहे मोष्वक्रन्कर्म पूर्णादर्वि देहिमऽ आनः पुनर्नो वयꣳसोमावरुद्रं भेषजमसि त्र्यंबकंयजामहे[3] त्र्यायुषं[4] जमदग्नेः सुप्रजास्त्वायसुवीर्याय।।शेषाः।।२९ (कण्डिकाः)।।अध्या०।।३।। मंत्रः।।३३।।ऋ०।।६२।।संख्या।।८५६।।

एदमापोऽअस्मान्वृत्रस्यासि चित्पतिर्मावो विश्वोदेवस्योर्गसि व्रतङ्कृणुत श्वात्राःपीतास्त्वमग्नऽ एषाते चिन्मनानुत्वा समख्यऽ एषते परिमा प्रतिपन्थामदित्यास्त्वग्वनेषुव्वि सूर्यस्यचक्षुरुस्रावेतं भद्रोमे नमोमित्रस्य[5] व्वरुणस्योत्तंभनꣳ सोमदुर्य्यान्।।शेषाः ।।१३(कण्डिकाः)।।अ.।।४।।मं.।।२४।।ऋ.।।३७।।संख्या।।७४२।।

अग्नेस्तनूरग्नेर्जनित्रमग्नावग्निरापतयेत्वाꣳशुरꣳशुष्टे[6] तप्तायनीमे सिꣳहयस्येन्द्रघोषस्त्वा द्वितीयासिꣳहयसि[7]

---

१. "शोचिषेऽउप" इति मू०

२. "मध्वराꣳ" इति मू०

३. "जजामहे" इति मू०

४. "त्र्यायुखं" इति मू०

५. "नमोमे" इति मू०

६. "त्वाꣳशुष्टे" इति मू०

७. "सिꣳहयसिस्वाहा" इत्यर्थः

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

षुंजतेमनऽ इदंविष्णुरिरावतीधेनुमती देवश्रुतौदेवेषु दिवोवा रक्षोहणन्द्वे[१] रक्षोहणोद्वे[२] इन्द्रस्यस्यूर्विभूरस्युशिक्कविज्योंतिरस्ययन्नो देवसवितरत्यन्यान्वयङ्रुहेम।।शेषा:।।१८(कण्डिका:) ।।अध्या०।।५।।मं. ।।२३।।ऋ०।।४१।।संख्या।।८०६।।

अग्रेणीर्द्वें[३] षाते तद्विष्णो: परिवीरस्युपावीरसि घृतेनाक्तौ माहिरिदमाप: सन्ते घृतंघृतपावानो मापो हविष्मतीरिमाऽ अग्नेर्वो देवीराप: कार्षिरसि षमग्ने मनोमऽ इन्द्रायत्वा षत्तऽ ऊर्जंधत्स्व प्रागपाक्त्वेव्वच: शेषा:।।१४(कण्डिका:)।।अ.।।६।।मं.।।२१।। ऋ.।।३५।।सं.।।६५८।।[४]

वाचस्पतये मधुमतीर्नऽ इंद्रवायूऽइमे षावाॅं सुवीरोव्वीरान्नच्छिन्नस्यते सप्रथमोयंवेनो[५] मनोन सुप्रजा:प्रजा षेदेवासऽ आग्रयणोसि मित्रावरुणाभ्यामिन्द्राय मूर्द्धानंदिवो ध्रुवोसि षत्तऽ आत्मनऽओजसे[६] कोसि मधवेत्वाघौमासश्चर्षणीधृत:[७] शृणुतामे मरुत्वाँइंद्रोदु रूपेणव: कोदादेतत्ते।। शेषा:।।१९ (कण्डिका:)।।अध्या०।।७।।मं.।।२६।।ऋ०।।४५।।७८८।।

---

१. "रक्षोहणङ्रक्षोहनम्" इत्यर्थ:
२. "रक्षोहणोरक्षोहन:" इत्यर्थ:
३. "अग्रेणीरग्रेनी:' इत्यर्थ:।
४. इत: परं पदसंख्या मूलपुस्तके नोल्लिखिता, अत: अस्माभिरेव निर्दिश्यते।
५. "सप्रथमरयंवेनो" इति मू०
६. अत्र आत्मनऽओजसे" इत्यस्य कण्डिकात्वेन पृथग्गणना कृता लेखकेन। गलदृक्शिक्षायाम् "आत्मने सम्पृक्ते" इत्युक्तम्।
७. "घोमासश्चऋषणीधृत: इति मू०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आदित्येभ्यस्त्वा कदाचन व्वाममद्य हरिरसि यस्ते देवकृतस्यैनसो धातारातिर्व्वयꣳ ह्युरुꣳ ह्यग्नेरनीकꣳ समुद्रेते पुरुदस्मोव्विषुरूपऽ आतिष्ठ युक्ष्वाह्यग्नेपवस्वादृश्रमस्येडेरंते व्विनो व्विश्वकर्मन्हविषोशिगिहि सत्रस्यऽऋद्धिर्युवंतं परमेष्ठीद्वे[१]ऽ इंद्रश्च प्रोह्यमाणोद्वे[२] विश्वेदेवाद्विंतीया[३] देवान्दिवं चतुस्त्रिꣳशत्तन्तवो यज्ञस्यदोहऽ आपवस्व स्वाहा।। विषमोध्याय:[४]।।शेषा:।। २७ (कण्डिका:)।।अध्या०।।८।। मंत्र:।।३०।।ऋ०।।५७।। संख्या।।१०१९।।

देवसवितरपाꣳरसं ग्रहाऽऊर्ज्जाहुतयो व्वातोवा देवस्याहं बृहस्पतेव्वाजमेषावऽ एषस्य[५] व्वाजेवाजेवतामापयेस्वाहा व्वाजस्येमꣳ सरस्वत्यैव्वाचो व्वसवस्त्रयोदशाक्षरेण येदेवाऽ उपाꣳशोर्व्वीर्य्येण ब्राह्मणानाꣳराजा।।शेषा:।।२३(कण्डिका:)।। अध्या०।।९।।मं.।।१६।।ऋ०।।३९।।संख्या।।७२८।।

अपोदेवा वृष्णऽऊर्मिरर्थेतस्थ सोमस्यत्त्विषिरनिभृष्टमसि सधमादोद्युम्निनी:[६] प्रतीचीमोदीचीमा सोमस्यत्वा मित्रावरुणयोस्त्वा

---

१. "परमेष्ठीपरमेस्थी" इत्यर्थ:

२. "प्रोह्यमाण:प्रोह्यमान:" इत्यर्थ:

३. "विश्वेदेवाश्चमसेषु" इत्यर्थ:

४. अस्मिन्नध्याये पदसंख्याया विषमत्वम्, अध्यायविशम् इति मू०

५. "एषस्यो" इति मू०

६. "द्युम्निनीप्रतीचीमो" इति मू०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मातेग्नयेगृहपतयऽ इयदसि स्योनास्यग्निःपृथुर्मघवन्नभिष्णक्।। शेषाः।।१७ (कण्डिकाः)।।अ.।।१०।।मं.।।१५।।ऋ.।।३२।।सं.।।५७८।।

खुञ्जानःप्रथमँखस्य[१]प्रयाणमाददेभ्रिरसि हस्तऽआधाय प्रतूर्तव्वाजिन्युंजाथाॅरासभं[२] प्रतूर्वन्नाक्रम्यव्वाजिन्नुत्क्रामोदक्रमी-त्परिवाजपतिस्त्वमग्नेपांपृष्ठॅ संव्वसाथां पुरीष्योसि तमुद्विनीया[३] सीदहोतः सन्ते सुजातोज्योतिषोदुस्थिरोभवऽ ऋतॅसत्यमोषधयः-प्रत्यापोहि मित्रःसॅसृज्य रुद्राःसॅसृज्य सॅसृष्टांव्वसुभिः सिनीवालीसुकपर्दोखांकृणोतु व्वसवस्त्वादितिष्टेदितिष्ट्वा[४] मित्रस्यचर्षणीधृतो देवस्त्वोत्थायबृहत्याकूतिमग्निं मासु दृॅहस्वदेवि द्वन्नःसर्पिरासुतिः परस्याऽअधि परमस्याःपरावतो खदग्ने नाभापृथिव्या खाःसेनाऽ उदेषां चतुष्पदेद्वे[५] शेषाः।।३२(कण्डिकाः) ।।अ.।।११।।मं. ।।४६।।ऋ.।।७८।।सं.।।११७८।।

दृशानोरुक्मो नक्तोषासाद्वे[६]ऽ अक्रन्ददग्नि[७]रग्नेभ्या-वर्तिन्नग्नेऽअङ्गिरः पुनरूर्जा[८] सहरष्यात्वाग्रेबृहन्नंतरग्ने शिवोभूत्वा

---

१. "खुखानःप्रथमञ्खस्य" इति मू०
२. "रासभन्" इति मू०
३. "तमुत्वापाथ्यः" इत्यर्थः
४. "व्वसवस्त्वादितिष्ट्वा" इति मू०
५. "चतुष्पदेचतुःपदे" इत्यर्थः
६. "नक्तोषासानक्तोषसा" इत्यर्थः
७. "द्वेक्रन्ददग्निर" इति मू०
८. "पुनऽऊर्जा" इति मू०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समुद्रेत्वा विश्वस्यकेतुरुशिक्पावको यस्ते त्वामग्नेस्ताव्यग्निः प्रेत्पुनस्त्वाग्नेयदग्नेदिवऽ इडामग्ने ताऽअस्य संव्वामग्नेत्वम्मातेवपुत्रमसुन्वन्तमयजमानं यस्यास्ते यंते कामङ्कामदुघे शतंवऽ ओषधीरित्यश्वत्थेवो यत्रौषधीरिष्कृतिर्नामातिविश्वा यस्यौषधीः साकँयक्ष्मान्यावो याःफलिनीर्मुंचंतुमा विष्ठिताःपृथिवीं[1] याश्च त्वाङ्गन्धर्वा दीर्घायुस्ते त्वमुत्तमा मामाभ्याग्नेयदग्नेतवेष्कर्तारमध्वरस्यऽ ऋतावानंद्वेऽ[2] आप्यायस्वाप्यायस्वद्वितीया[3] तुभ्यंता राजति।। विषमोध्यायः[4]।।शेषाः।। ५४(कण्डिकाः)।।अ.।।१२।।मं.।।५४।।ऋ.।।१०८।।सं.।।१६७३।।

मयिगृह्णामि ब्रह्मजज्ञानङ्[5] हिरण्यगर्भःसन्नमोस्तु येवा प्रतिस्पशऽ[6] उदग्ने भुवोयज्ञस्य ध्रुवासि मधुश्चाषाढासि मधुव्वातास्त्रीन्त्समुद्रानितोजज्ञऽ[7] इषेरायेग्ने[8]युक्ष्वऽ ऋचेत्वा व्वातस्यजूतिं वरूत्रीन्त्वष्टुर्वोऽअग्निः साहस्रङ्शतधारमजोहि[9]

---

१. "याऽओषधीःर्याश्च" इति मू०

२. "ऋतावानमृतवानम्" इत्यर्थः

३. "आप्यायस्वमदिन्तम" इत्यर्थः

४. अस्मिन्नध्याये पदसंख्याया विषमत्वम्। "विश" इति मू०

५. "ब्रह्मयज्ञाङ्" इति मू०

६. "प्रतिस्पशः" इति मू०

७. "यज्ञऽ" इति मू०

८. "रायेऽअग्ने" इति मू०

९. "शतधारजोहि" इति मू०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

त्वंयविष्ठ[१] दक्षिणाव्विश्वकर्मा पश्चाद्विश्वव्यचाऽ इदमुत्तरात्ताऽइन्द्रम् ।।शेषाः।।२७(कण्डिकाः)।।अ.।।१३।।मं.।।२६।।ऋ.।।५३।।सं.।।८७४।।

ध्रुवक्षितिर्ध्रुवयोनिः कुलायिनीघृतवती स्वैर्दक्षैः पृथिव्याःपुरीषमदित्यास्त्वा सजूर्ऋतुभिः प्राणम्मे मूर्द्धाव्वयो राज्ञस्यायुर्मे माच्छन्दोग्नेर्भागो व्वसूनाᳫरुद्राणान्नवभिःपितरो नवविᳫशत्याव्वनस्पतयः परमेस्थी।। विषमोध्यायः[२]।।शेषाः।। १०(कण्डिकाः)।।अ.।।१४।।मं.।।१५।।ऋ.।।२५।।सं.।।४६५।।

अग्नेजातान्सहसाजातान्षोडशीस्तोमऽ आच्छत्प्रच्छत्तन्तु-नारायः प्रतिपदसि त्रिवृत्त्रिवृते व्विराड्दक्षिणा[३] स्वराडुदीच्यधि-पत्न्यस्ययंपुरो दक्षिणाव्विश्वकर्मा पश्चाद्विश्वव्यचाऽ उत्तरात्सँयद्वसु[४] रुपर्यर्व्वाग्वसुरबोध्यग्निरवोचामकवये सखायःसं त्वाञ्चित्रश्रवस्तम[५] सयोजतेग्नेव्वाजस्य भद्रोनो भद्रम्मनोवस्थिराग्निंतमुभेसुश्चंद्रा-ग्नेतमेभि[६]-र्नस्तंपत्नीभिः संप्रच्यवध्वमुप प्रोथदश्वऽ आयोष्ट्वा त्वा।। विषमोध्यायः[७] ।।शेषाः।।२२(कण्डिकाः)।।अ.।।१५।।मं.।। ३१।।ऋ. ।।५३।। सं. ।।८३३।।

---

१. "त्वंजविष्ठ" इति मू०

२. "विशम्" इति मू०

३. "विराट्दक्षिणा" इति मू०

४. "सजद्वसुरुप......" इति मू०

५. "त्वाँचित्रश्रवस्तम" इति मू०

६. "सुश्चंद्राग्नेमेभिर्न....." इति मू०

७. अस्मिन्नध्याये पदसंख्याया विषमत्वम् "विशम्" इति मू०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नमस्ते ग्धाते ग्धामिषुᳬ शिवेनव्वचसाध्यवोचदसौग्धो नमोस्तु ग्धाते परितेवततत्यधनुर्नमस्ते मानो बभ्लुशायव्याधिने रोहितायस्थपतयऽ[१] उष्णीषिणेगिरिचराय श्वभ्य:श्वपतिभ्य: कपर्दिनेव्युप्तकेशाय बिल्मिनेकवचिने धृष्णवेप्रमृशाय स्तुत्यायपथ्याय कूप्यायावट्याय व्वात्यायरेष्म्याय शङ्गवेपशुपतये पार्ग्धायावार्ग्धाय सिकत्यायप्रवाह्ग्धाय व्रज्यायगोष्ठ्याय शुष्क्यायहरित्याय पर्णायपर्णशदायेमारुद्राय परिनो मीढुष्टमद्वे[२] सहस्त्राणिसहस्त्रशोस्मिन्महति[३] नीलग्रीवा:शितिकंठा व्वृक्षेषुशष्पिंजरा भूतानामधिपतय: पथांपथिरक्षयस्तीर्थानि-प्रचरंत्यन्नेषुव्विविध्यंति नमोस्त्वन्नम्।। विषमोध्याय:[४]।। शेषा:।।२३(कण्डिका:)।।अ.।।१६।।मं.।।४०।।ऋ.।।६३।।सं. ।।७०३।।

अश्मन्नूर्जᳬ समुद्रस्यत्वापामिदमग्नेपावक नमस्ते नृषदेद्वे[५] ग्धेदेवाद्वितीया[६] प्राणदाऽअपानदा ग्धऽइमा[७] व्विश्वतश्चक्षुरुत किᳬंस्विद्घाते[८] ग्धोनस्तऽआ परोदिवा तमित्सऽइषुहस्तैर्बृहस्पतेपरि

---

१. "स्थपतयेऽउष्णीषिणे" इति मू०

२. "मीढुष्टममीढुस्तम" इत्यर्थ:

३. "सहस्त्रशरस्मिन्महति" इति मू०

४. अस्मिन्नध्याये पदानां संख्या विषमास्ति। "विशम्" इति मू०

५. "नृषदेनृसदे" इत्यर्थ:

६. "ग्धेदेवा:" इति मू०

७. "ग्धेऽइमा" इति मू०

८. "किᳬंस्वित्ग्धाते" इति मू०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बलविज्ञायस्थविरो गोत्रभिदंगोविदमभिगोत्राणीन्द्रऽआसामुद्धर्षया-वसृष्टापरासौद्या मर्माणितऽ उदेनं सुमिद्धेऽअग्नौ सूर्यरश्मिर्हरिकेशो देवहूर्यज्ञऽ उदग्राभंच क्रमध्वमग्निना स्वर्यतोग्नेप्राग्नेसहस्त्राक्षाजुह्वान:सुप्रतीक: प्रेद्धोऽअग्ने सप्ततऽ ऋत:सत्य: स्वतवान्प्रघासी घृतम्मिमिक्षे समुद्रादूर्मिश्चत्वारिशृङ्गाऽ एताऽअर्षन्त्येतेऽअर्षत्यभिप्रवन्त धामन्तऽ ऊर्मिम्।। विषमोध्याय:[१]।। शेषा:।।४५(कण्डिका:)।। अ.।।१७।।मं.।।४७।। ऋ.।।९२।।सं.।।१४६५।।

व्वाजश्च प्राणोपानऽ ओज:सहो ज्यैष्ठ्यमाधिपत्यं सत्यंश्रद्धऽ ऋतममृतं यन्ताधर्ता शंमयऽ ऊक्सूनृता रयीरायो व्वित्तंवेद्यं व्रीहयोयवाऽ अश्मामृत्तिकाग्निरापो मित्रोव्वरुण: स्रुचश्चमसा व्रतमृतवश्चतस्रोष्टौ त्र्यविस्त्र्यवी[२] पष्ठवाट्पष्ठौही व्वाजायस्वाहा वाङ्मनो व्विश्वेऽअद्य[३] व्वाजोनो व्वाजोन: पय:पृथिव्यां सुषुम्णोद्वे[४] इषिरोव्विश्वव्यचा: प्रजापतिर्विश्वकर्मा समुद्रोसि तत्त्वा स्वर्णाग्निंयुनज्मींदुर्दक्षो दिवोमूर्धेष्टोऽअग्नि: प्रस्तरेणपरिधिना यद्दत्तं[५] यत्रधाराऽ ऋचोयजूंषि[६] सहदानुंपुरुहूत

---

१. अस्मिन्नध्याये पदानां संख्या विषमास्ति। "विशम्" इति मू०

२. "त्र्यवित्र्यवी" इति मू०

३. "विश्वेअद्य" इति मू०

४. "सुषुम्ण:सुसुम्न:" इत्यर्थ:

५. "यदत्तं" इति मू०

६. "ऋचो यषुंषि" इति मू०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परावतऽआश्यामतं धामच्छदग्निर्नःशुभे।।शेषाः।।२५(कण्डिकाः)[१]
।।अ.।।१८।।मं.[२] ।।४४।।ऋ.।।६९।।सं.[३]।।९००।।

स्वाद्वींत्वा परीतः पुनातितऽ आश्विनंतेजस्तेजोसि सोमस्यरूपमासंदीरूपं धानानाꣳरूपमाश्रावयाश्विभ्यांप्रातःसवनं व्वायव्यैर्व्वायव्यानि व्रतेनदीक्षामेतावद्रूपꣳ सुरावंतंबर्हिषदं यस्ते यदत्र पितृभ्यःस्वधायिभ्यः पवमानःसो व्वैश्वदेवीपुनतीदꣳहविरंगिर-सोनो बर्हिषदोद्वे[४]ऽ आयंत्वग्निष्वात्ताद्वेऽ[५] आसीनासोऽअरुणीनां येचाधायथोशन्तस्त्वापांफेनेनादूभ्यःक्षीरं दृष्ट्वारूपे सीसेनतंत्रꣳ सरस्वतीमनसेन्द्रःसुत्रामान्त्राणिस्थालीर[६]विर्नेन्द्रस्यरूपमात्मन्नुपस्थे सोमऽइंदुः।।शेषाः।।५५[७](कण्डिकाः)।।अ.।।१९।।मं.।।३८[८]।।ऋ.।।९३[९]
।।सं.।।१३७६।।

क्षत्रस्ययोनिरश्विनोर्भैषज्येन शिरोमे नाभिर्मे प्रतिक्षत्रे प्रथमाद्वितीयैर्यद्देवा द्रुपदादिवमुमुचानऽ उद्वयं यत्रब्रह्माꣳशुनाते

१. लेखकेन अवशिष्टानां कण्डिकाप्रतीकानां गणना न कृता।
२. लेखकेन संकलितानां कण्डिकोक्तप्रतीकानां गणना न कृता।
३. लेखकेन अस्याध्यायस्य कण्डिकोक्तप्रतीकानां गणना न कृता।
४. बर्हिषदोबर्हिसदः'' इत्यर्थः
५. ''अग्निष्वात्ताऽअग्निस्वात्ताः'' इत्यर्थः
६. ''सुत्रामाविर्नेन्द्रस्य'' इति मू०
७. लेखकेनावशिष्टानां कण्डिकानाप्रतीकानां गणना न कृता।
८. लेखकेन संकलितानां कण्डिकोक्तप्रतीकानां गणना न कृता।
९. मूलेत्राप्यस्याध्यायस्य कण्डिकोक्तप्रतीकानां गणना न दृश्यते।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

धानावंतंकरम्भिणं बृहदिंद्राय प्राणपामेश्विनकृतस्यते नराशꣳसः-प्रतीडितोदेवैर्जुषाणोबर्हिरिंद्रंदुरस्त्वष्टादधद्वनस्पतिरवसृष्टऽ आनो हरिभिर्य्यातु त्रातारमिन्द्रमेवेत्समिद्धोऽअग्निस्तनूपाभिषजेन्द्रायेन्दु-मश्विनानमुचेः पातन्नस्तिस्त्रस्त्रेधऽ ऋतुथेन्द्रोश्विना[१] हविस्तमिन्द्रꣳ[२] सविताव्वरुणो व्वरुणःक्षत्रमश्विनागोभिस्ताभिषजाश्विनातेजसा गोमदू पावकानश्चोदयित्रीसूनृतानाꣳ सोम्यम्मधु॥शेषाः॥३९ (कण्डिकाः)[३] ॥अ.॥२०॥मं.॥४२[४]॥ऋ.॥८१[५]॥सं.॥११६४॥

इमम्मे त्वन्नो महीमू सुत्रामाणंपृथिवीꣳ सुनावमा समिद्धोऽअग्निस्तनूनपाच्छुचिव्रतः सुबर्हिरग्निर्दैव्याहोतारा तिस्रऽइडा त्वष्टातुरीपः स्वाहायज्ञं व्वसन्तेनऽऋतुना ग्रीष्मेणरुद्रा व्वर्षाभिरादित्याः शैशिरेणत्रयस्त्रिꣳशे होतायक्षदिडेडितो दुरोदिशो दैव्याहोतारा व्वनस्पतिꣳशमितारमग्निꣳस्वाहाश्विनौच्छागस्या[६]-श्विनौच्छागस्याग्निꣳस्विष्टकृतं देवंबर्हिर्देवीऽउषासौ देवीजोष्ट्री

---

१. "ऋतुथेन्द्रश्विनाहवि......" इति मू०
२. "तमिन्द्रः" इति मू०
३. अवशिष्टानां कण्डिकाप्रतीकानां गणना मूले न दृश्यते। अग्रिमेष्वध्यायेष्वेवमेव गणना नास्ति।
४. संकलितानां कण्डिकाप्रतीकानां गणना मूले न दृश्यते। अतः परमध्यायान्ते गणना न दृश्यते।
५. अस्याध्यास्य कण्डिकोक्तप्रतीकानां गणना मूले न दृश्यते। एवमेवाग्रिमेष्वध्यायेष्वपि गणना नास्ति।
६. "अश्विनौच्छागस्यसरस्वतीम्" इत्यर्थः

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देवीस्तिस्रो देवऽइंद्रः सूपस्थाऽअद्य ब्रूहि।। विषमोध्याय:[१] ।।शेषा:।। २६(कण्डिका:)।।अ.।।२१।।मं.।।३१।।ऋ.।।५७।।सं.।।९४३।।

तेजोसि प्रजापतयेत्वापाम्मोदाय यतेधावते देवस्यचेततः सुष्टुतिंद्वे[२] सहव्यवाडग्निंदूतं कायकस्माऽ आब्रह्मँश्चक्षुषेश्रोत्राय प्राच्यैदिशे नक्षत्रेभ्योनक्षत्रियेभ्यः प्राणोपानः स्वर्गाय।। विषमोध्याय:[३]।। शेषा:।। १५(कण्डिका:)।।अ.।।२२।।मं.।।१४।। ऋ.।।२९।।सं.।।४४१।।

प्रजापतयेत्वा युंजंतिब्रध्नं यद्वातो व्वसवस्त्वा सूर्यऽएकाकी कास्विद्वायुष्ट्वा सङ्शितोरश्मिना नवै यकासकावग्रेवृक्षस्यो-र्ध्वामिनामूर्ध्वमेनं यदस्या यद्देवासो यद्धरिणो बहुमन्यते दधिक्राव्णोऽअकारिषमृतवस्तेर्द्धमासा:परूᳮषि दैव्याऽअध्वर्यवो द्यौस्ते किᳮस्विदपितेषु केष्वंतः पंचस्वन्तः कत्यस्य व्वेदाहं पृच्छामित्वेयंव्वेदिर्होतायक्षद्धोतर्यज[४]।।शेषा:।। २६(कण्डिका:) ।।मं.।।३१।।ऋ.।।५७।।सं.।।८४४।।

अश्वस्तूपरो रोहितोधूम्ररोहितः पृश्निस्तिरश्चीनपृश्निरुन्नतऽ-ऋषभऽ एताऽऐन्द्राग्ना धूम्राबभ्रुनीकाशाः शुनासीरीया:श्वेताऽ अह्नेपारावतान्भूम्याऽआखून्वसुभ्यऽऋश्यान्प्रजापतयेच मयु:प्राजापत्य: सोमायकुलुङ्गः सुपर्णः पार्जन्यः पुरुषमृगश्चन्द्रमसः श्वित्रऽआदित्यानां

---

१. अस्मिन्नध्याये पदानां संख्या विषमास्ति। ''विशम्'' इति मूले।
२. ''सुष्टुतिङ्सुस्तुतिम्'' इत्यर्थः
३. अस्मिन्नध्याये पदानां संख्या विषमा। ''विशम्'' इति मू०
४. ''यव'' इति मू०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देवानांपृषत:[१]।।शेषा:।।२४(कण्डिका:)।।अ.।।२४।।मं.।।१६।। ऋ.।।४०।।सं.।।६१४।।

शादंदद्भिर्व्वातंप्राणेनाग्ने: पक्षतिरिन्द्राग्न्यो:पक्षतिर्मरुताꣳ-स्कंधा: पूषणंव्वनिष्ठुनेन्द्रस्यक्रोडो देवानांभद्रा तान्पूर्वया तमीशानं मानो यन्निर्णिजैषच्छागो यद्धविष्यꣳ[२] होताध्वर्युर्यदश्वस्य यदूवध्यं येव्वाजिनं यन्नीक्षणं मात्वा निक्रमणन्निषदनं यत्ते चतुस्त्रिꣳश-द्वाजिनो मात्वेमानु सीषधातिद्वे[३]।।शेषा:।।१९ (कण्डिका:) ।।अ.।।२५।।मं.।।२५।।ऋ.।।४४।।सं.।।९१२।।

अग्निश्च बृहस्पतेऽअत्येन्द्रगोमन्निन्द्रऽ ऋतावानंद्वे[४] तंवो यद्वाहिष्ठमेहयुपह्वरेगिरीणामुच्चातऽ एनाव्विश्वानि तवायममेवन: स्वादिष्ठयामदिष्ठया रक्षोहाव्विश्वचर्षणिरासदत्[५]। शेषा:।।१० (कण्डिका:)।।अ.।।२६।। मं.।।२५।।ऋ.।।१५।।सं.।।३५४।।

समास्त्वा संचातिनिहस्तनूनपादसुरो मध्वायज्ञमच्छायꣳ सयक्षत्ते[६]ऽअस्य तन्न: पीवोऽअन्नारयिवृधो[७] रायेन्वापोह

---

१. "प्रेषित:।। सम्।।" इति मू०

२. "यद्धविष्यो" इति मू०

३. "सीषधातिसीसधाति" इत्यर्थ:। अत:परं "सम्" इति मू०

४. "ऋतावानमृतवानम्" इत्यर्थ:।

५. अत: परं "सम्" इति मू०

६. "सयक्षत्ते" इति मू०

७. "अन्नान्नरविृधो" इति मू०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यश्चिन्नियुत्वान्वायो व्वायोशुक्रो नत्वावाँस्त्वामित्कयानोभीषु[१] ध्रुवःसीद[२]।।शेषाः।।२५ (कण्डिकाः)।।अ.।।२७।।मं.।।१९।।ऋ. ।।४४।।सं.।।६५२।।

इंद्रमिडस्तनूनपातमूतिभिरोजोन भिषजासखाया धियोजोष्टारं देवंबर्हिरिन्द्रꣳसङ्घाते व्वसुधितीदेवं मधुशाखःसुपिप्पलः स्विष्टङ्कुर्व्वन्तसमिधानम्महदीडेन्यमीडितꣳ सुबर्हिषंपूषण्वन्तꣳ हिरण्यपर्णमुक्थिनं देवंबर्हिश्च्छागेन[३]।।शेषाः।।२१(कण्डिकाः) ।।अ.।।२८।।मं.।।१५।।ऋ.।।३६।।सं.।।४२७।।

समिद्धोऽअञ्जन्नीड्यश्चैताऽउ त्वष्टावीरँ यदक्रंदो यमेनदत्तमसियमस्त्रीणितऽ इमातेनुत्वेर्मातासःसिलिकमध्यमासस्तवशरीरꣳ शसनँव्वाजी परमंयत्समिद्धोऽअद्य तनूनपात्पथो नराशꣳसस्यमहिमानं प्राचीनम्बर्हिरानः सद्योजातः केतुंकृण्वन्धन्वनागा बह्वीनांपिता रथेतिष्ठन्ब्राह्मणासःपितरः सुपर्णंव्वस्तऽ आजङ्घंत्यहिरिवभोगैर्दिवःपृथिव्याऽ आक्रन्दयामूरष्टाकपालः[४]।। शेषाः।।२९।।अ.।।३०।। मं.।।३१।।ऋ.।।६०।।सं. ।।१०७१।।

---

१. ''त्वात्वमित्कयानोभिषु'' इति मू०
२. ''ध्रुवःसीदसम्'' इति मू०
''सम्'' इत्यस्यार्थो यदस्मिन्नध्याये पदानां संख्या समास्ति।
३. ''छागेनविशम्'' इति मू०, ''विशम्'' इत्यनेन ''विषमोध्यायः'' इति ज्ञातव्यः।
४. ''रष्टाकपालः'' ''विशम्'' इति मू०, ''विशम्'' इत्यनेन ''विषमोध्याय इति ज्ञातव्यः।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विश्वानिदेव विभक्तारछ्हवामहे नृत्तायसूतं नदीभ्य:पौञ्जिष्ठमृतयेस्तेनहृदयं मन्यवेयस्तापं यमायथमसूछं सरोभ्योधैवरं बीभत्सायैपौल्कसं प्रतिश्रुत्कायाऽअर्तनमग्नयेपी-वानमथैतान्क्लीब:[1]।।शेषा:[2]।।८ ।।अ.।।३०।।मं.।।१२।।ऋ. ।।२०।।सं. ।।४११।।

सहस्रशीर्षापुरुषऽ एतावानस्य त्रिपादूर्ध्वस्ततोविराडृ-च:सामानि तंयज्ञं ब्राह्मणोस्य यज्ञेनयज्ञमद्भ्य:संभृत: प्रजापतिश्चरति योदेवेभ्यऽ इषाण[3]।। शेषा:।।११।।अ.।।३१।। मं.।।११।। ऋ.।।२२।।सं.।।३३५।।

तदेव नतस्यैषोह[4] यस्माज्जातं[5] यंक्रंदसी सन: परिद्यावापृथिवी सदसस्पतिं यांमेधां मेधाम्मे तेस्वाहा[6]।।शेषा:।। ६।।अ.।।३२।।मं. ।।१०।।ऋ.।।१६।।सं.।।२६२।।

अस्याजरासो द्वेविरूपे त्रीणिशतायदग्नेशर्द्ध[7] श्रुधिश्रुत्कर्ण विश्वेषामदितिरापश्चिदातिष्ठंतंपरि बृहन्निदिंद्रेंद्रोवृत्रमिमांते

---

१. "क्लीब:विशम" इति मू०, "विशम्" इति पूर्ववज्ज्ञेय:।
२. "शे" इति मू०
३. "इषाणविशम्" इति मू०, "विशम्" इति पूर्ववज्ज्ञेय:।
४. "नतस्येषोह" इति मू०
५. "यस्माछ्वातो" इति मू०
६. "स्वाहासम्" इति मू०, "सम्" इति पूर्ववज्ज्ञेय:।
७. "शतायदग्ने" इति मू०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दैव्यावध्वर्य्यूऽ[१] आनो यदद्य बण्महानिंद्रवायूबृहस्पति-मधिनोस्मेरुद्राऽ अर्व्वाञ्चोऽअद्य[२] विश्वेदेवा: प्रवायुं विदद्यद्युग्राव्विघनिना येत्वा जनिष्ठाऽउग्र: प्रवीरयोपनो[३] ब्रह्माणिमऽ इमाऽउऽ अयꣳ[४]सहस्रमिंद्रवायूसुसन्दृशऽ[५] ऋधगित्थायातं[६] प्रैतु चंद्रमाऽअप्सु देवंदेवंवऽ इन्द्राग्नीऽअपाद् देवासोहृयपाधमत्रव: पूर्वथा[७]।।शे.।।४५।।अ.।।३३।।मं.।।४२।। ऋ.।।८७।। सं.।।१३०५।।

यज्जाग्रतो[८] येनकर्माणि पितुन्त्वनुनस्त्वमग्ने प्रमन्महे प्रवऽ इच्छंतित्वा नते सोमोधेनुꣳ हिरण्यपाणि:सविताप्नस्वतीमश्विना[९] प्रातरग्निमुतेदानीꣳ समध्वरायाश्वावतीर्द्वे[१०] पूषन्तव पथस्पथोद्वेऽ[११] आनासत्यायुष्यंव्वर्चस्यं यदोतनऽ[१२] इमागिरऽ उत्तिष्ठ प्रनूनꣳ

---

१. "दैव्यावध्वर्यानो" इति मू०
२. 'आर्व्वाचो" इति मू०
३. "प्रवीरयाशुचयऽउपनो" इति मू०
४. "उ अयꣳ" इति मू०
५. "सुसन्दृशा ऋ" इति मू०
६. "ऋधगित्यायातं" इति मू०
७. "पूर्वथाविशं" इति मू०, "विशं" इति पूर्ववज्ज्ञेय:।
८. "यच्चाग्रतो" इति मू०
९. "सवितरप्नस्वतीमश्विना" इति मू०
१०. "अश्वावतीरश्ववती:" इत्यर्थ:
११. "पथस्पथ:पथ:पथ:" इत्यर्थ:
१२. "यद्वोतन्नऽ" इति मू०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सुवीरा:[१]॥शे.॥३२॥अ. ॥३४॥मं.॥२५॥ऋ.॥५७॥सं. ॥९३३॥

अपेत: सविताते सविताता ऽ[२]इमंजीवेभ्यो व्वहव्वपाꣳ स्योनापृथिव्यस्मात्त्वꣳस्वाहा[३]॥ शेषा:॥११॥मं.॥७॥ऋ.॥१८॥ सं.॥२७३॥

ऋचंवाचं यन्मे मित्रोव्वरुणो व्वात:पवतां द्यौ:शान्तिर्नमस्ते यतोयत:समीहसे चशतात्[४]॥ शे.॥६॥अ.॥३६॥मं.॥७॥ऋ. ॥१३॥सं.॥१७२॥

नारिरसि देव्व्योव्वम्रो यमायमखाय स्वाहामरुद्धिर्गर्भो-देवानामपश्यङ्गोपां व्विश्वासांभुवाꣳ स्वाहारात्रि:[५]॥ शे.॥६॥ अ.॥३७॥मं.॥७॥ऋ.॥१३॥ सं.॥१९८॥

सरस्वत्यसावश्विभ्यांपिन्वस्व यस्ते गायत्रंछन्दो व्विशाऽआशा दिविधाऽ अश्विनाघर्म्ममपातामश्विना याते क्षत्रस्यत्वाचिक्रदद्वृषा यावतीद्यावापृथिव्युपहूतस्यभक्षयामि[६]॥शे.॥ १०॥अ.॥३८॥मं.॥१२॥ऋ.॥२२॥ सं.॥३०४॥

---

१. "सुवीरा:विशं" इति मू० "विशं" इति पूर्ववत्।
२. सविताते द्वितीया (सविताताशरीराणि) इत्यर्थ:।
३. "स्वाहाविशम्" इति मू०, "विशम्" इति पूर्ववत्।
४. "चशतात् सम्" इति मू०, "सम्" इति पूर्ववत्।
५. "स्वाहारात्रि: सम्" इति मू०, "सम्" इति पूर्ववत्।
६. "भक्षयामिसम्" इति मू०, "सम्" इति पूर्ववत्।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वाहाप्राणेभ्यो व्वाचेप्राणाय मनसःकामꣳ सविताप्रथमऽ उग्रश्च लोमभ्यस्त्वचऽ आयासायप्रायासाय तपसेतप्यंते द्यावापृथिवीभ्याम्॥विशम्[१]॥शे.॥५॥अ.॥३९॥मं.॥८॥ऋ.॥१३॥ सं.॥१७९॥

ईशाव्वास्यमसुर्य्यानामान्धन्तमोविद्याँ[२]व्विद्यायांव्वायुरनिलꣳ हिरण्मयेनपात्रेण ब्रह्म[३]॥शे.॥९॥अ.॥४०॥मं. ॥५॥ऋ.॥१४॥ सं.॥२११॥

॥इतिपदानुक्रमणिका[४]॥

(रामचन्द्रबालमुकुन्दभटवाशिंकरलिखिता)

---

१. "विशम्" इति पूर्ववत्।
२. "तमोव्विद्याम्विद्यायां" इति मू०
३. "ब्रह्मविशम्" इति मू०, "विशम्" इति पूर्ववत्।
४. ॥इतिपदमंत्राणुक्रमणिकासमात्पः। ॥हस्ताक्षररामचंद्रबालमुकुन्दभटवाशिंकरदंडे॥ ॥सं.॥१९७५ जेष्ठ कृष्ण२ बुधवासरे ॥इति मू०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आचार्यगोपालचन्द्रमिश्रग्रन्थमालायां प्रकाशितग्रन्था:

१. वेदशाखापर्यालोचनम्
२. मधुपर्कपर्यालोचनम्
३. मूल्याध्यायपरिशिष्टम् (भाष्यचतुष्टयसमन्वितम्)
४. कात्यायनीयच्छन्द:सूत्रम् (भाष्यद्वयसहितम्)
५. प्राचीनभारतीयसामाजिकधर्म:
६. याज्ञिकन्यायमाला सविस्तरा
७. कौशिकगृह्यसूत्रम् सवृत्तिकम् परिभाषाध्याय:
८. श्रुतिप्रयोगसंग्रह:
९. श्रीश्यामदेवोपासना
१०. वैदिक एवं पौराणिक विचारदर्शन
११. प्राचीन भारतीय एवं आधुनिक–संस्कृत–शिक्षण
१२. काव्यरूप में प्रतिफलित श्रीहर्ष का शास्त्रपाण्डित्य
१३. कात्ययनशुल्बसूत्रम् (सभाष्य)
१४. शौनकशिक्षा (सानुवाद)
१५. कौशिकसूत्रप्रयोगोद्योत:
१६. उपाकर्मपीयूष:
१७. संहितापदयोर्विशेषपाठदीपिका (माध्यन्दिनीया)

प्रकाशक :
आचार्यगोपालचन्द्रमिश्र
वैदिक उन्नयन संस्थान
सीके. ३२/१७, ब्रह्मनाल, वाराणसी २२१०२ उ० प्र०
संहितापादयोर्विशेषपाठदीपिका
ISBN–९७८–९३–८२८१२–०७–४

मूल्य - ₹१५०/-

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh